जैन तत्त्वज्ञान कोर्स

कर्म विज्ञान

- पं.कृपाबोधिविजयजी म.सा

INDEX

01 कर्म विज्ञान का मूल स्रोत प्रभु वीर का केवल ज्ञान 01

02 SESSION 1 पुद्गलो की रोचक जानकारी 08

03 SESSION 2 कर्मबन्धन के कारणों की समझ 17

04 SESSION 3 आत्मा और कर्मबन्धन का स्वरूप 25

05 SESSION 4 कर्म के बन्ध-उदय एवं सत्ता की व्यवस्था 32

06 SESSION 5 ज्ञानावरण - दर्शनावरण कर्म की समझ 38

07 SESSION 6 अंतराय-मोहनीय कर्म की समझ 53

08 SESSION 7 आयुष्य-वेदनीय कर्म की समझ 65

09 SESSION 8 नाम-गोत्र कर्म की समझ 73

श्री प्रेम-भुवनभानु-पद्म-जयघोष-राजेंद्र-हेमचंद्र-संयमबोधिसूरी गुरुभ्यो नमः

जैन तत्त्वज्ञान कोर्स

कर्म विज्ञान

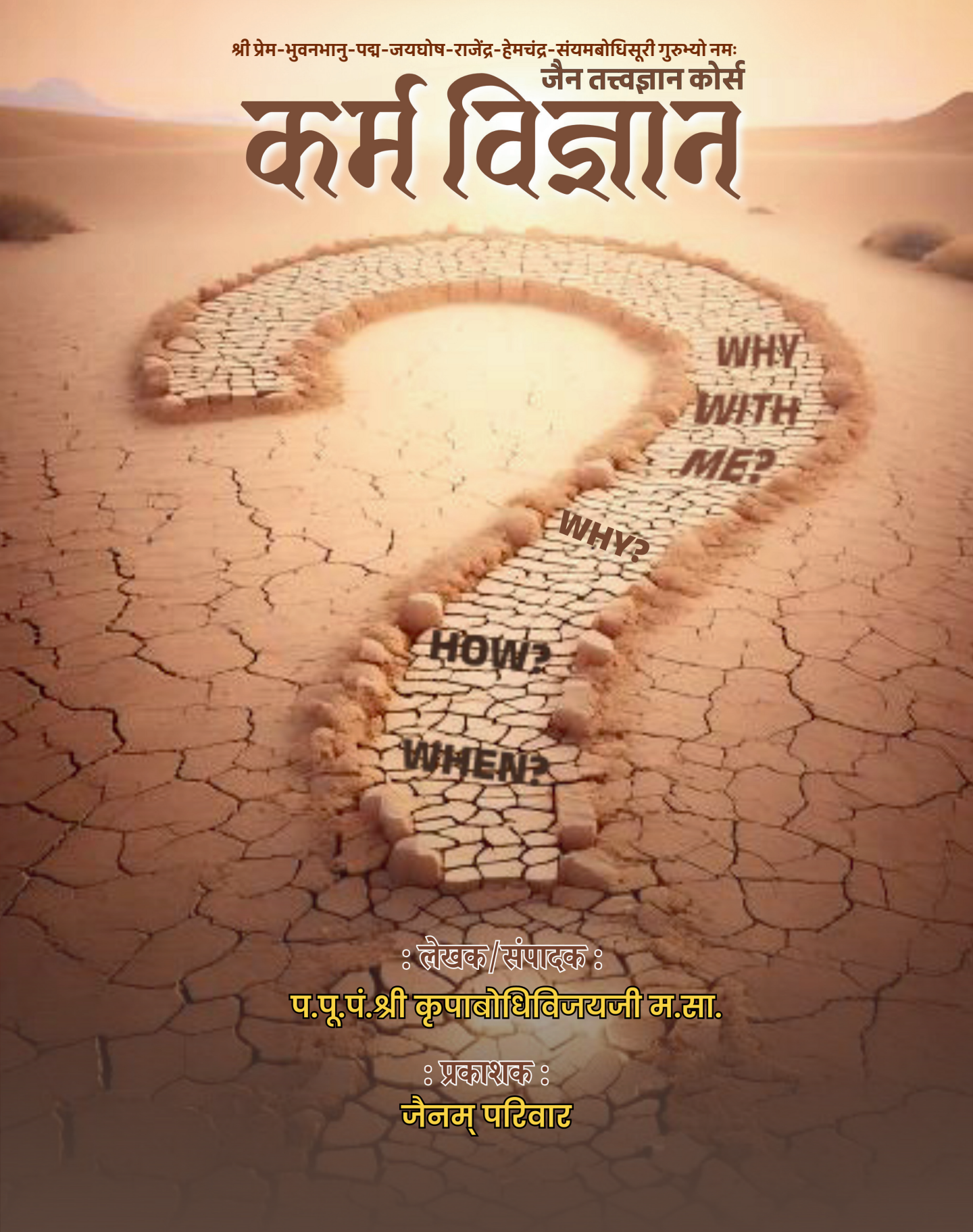

: लेखक/संपादक :

प.पू.पं.श्री कृपाबोधिविजयजी म.सा.

: प्रकाशक :

जैनम् परिवार

पुस्तक का नाम

कर्म विज्ञान

लेखक/संपादक

प.पू.पंन्यास
श्री कृपाबोधिविजयजी म.सा. (हेमघोष)

पृष्ठ
84

मूल्य
150/-

प्रकाशक

जैनम् परिवार

प्राप्तिस्थान

जैनम् परिवार
8980121712

जैनम् (मलाड)
9769289943

उत्सव (सूरत)
8000078495

विराग (वडोदरा)
9662517969

जय (जामनगर)
8320446897

।। श्री प्रेम-भुवनभानु-पद्म-जयघोष-राजेन्द्र हेमचन्द्र-संयमबोधि गुरुभ्यो नमः ।।

सुख का स्थान

कर्म विज्ञान

मेरी सारी इच्छाएँ क्यों पूरी नहीं होती ? मेरे ही प्रसंगों में क्यों किसी का उत्साह जागृत नहीं होता ? मेरी मेहनत के अनुसार मुझे सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक या कौटुंबिक दृष्टि से परिणाम क्यों नहीं मिलता ? मुझे ही क्यों सारी चीजें अनदेखी करनी पडती है ?
मुझे ही क्यों हर जगह कष्ट पडते हैं ? मैं ही क्यों सब बर्दाश्त करूँ ?

मेरे साथ ही ऐसा क्यों ? इच्छित कुछ मिलता नहीं, मिले तो टिकता नहीं, अगर टिक जाए तो भविष्य में मिले, उसका रिजर्वेशन करने का मार्ग क्या ? शायद ये सारे प्रश्न प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में परेशानियाँ लाते होंगे... इतना ही नहीं, जब जब ये सारे प्रश्न मन को प्रभावित करें तब तब संक्लेश-बेचैनी हताशा-निराशा से जीव दुःखी दुःखी बन जाता है। तो दूसरी ओर उपरोक्त सारी विषमताओं का कारण मेरे ही कर्म अर्थात् मेरे द्वारा की गई गलतियाँ हैं उसका स्वीकार होते ही मन में समाधि-प्रसन्नता-उत्साह आदि शुभ विचारों से जीव सुखी सुखी बन जाता है। याद रहे... गुनहगार दूसरा है यह विचारधारा में संक्लेश - बेचैनी - हताशा है, गुनहगार मैं खुद हूँ- कर्म है ऐसी विचारधारा में प्रसन्नता-समाधि-उत्साह है ।

इसलिए, कर्मविज्ञान का चिंतन जीवन में कार्यान्वित करने मात्र से सुख है, संतोष है, समाधि है । ऐसे सुख के मार्ग की आधुनिक शैली से प्रस्तुति मतलब प्रस्तुत पुस्तक - "कर्मविज्ञान"

वास्तविक विचारशैली-आचारशैली को गौण करके सुख-शांति-उत्साह की वृद्धि के स्वप्न देखनेवाली आज की... सीर्फ नाम की smart generation को प्रभुवीर उपदिष्ट कर्मविज्ञान का ज्ञान Real में Smart बनाएगा ।

Corrupt होती हुई या Hack होती हुई आज की Modern Technology के सामने यह कर्म का Software कभी भी Corrupt या Hack नहीं होता और उससे जीव का जन्म-मरण का चक्र, सुख-दुःख का आरोह-अवरोह चालु ही रहता है ।

जीवन का सूत्रधार ऐसे कर्म Software की आधुनिक तथा संक्षिप्त भाषा में संकल्पना तथा कर्म Software को भी Corrupt करके, उसको Hack करके, खुद का प्रभाव साबित करनेवाले धर्म Software की संकल्पना इस कर्मविज्ञान पुस्तक में पेष की गई है।

मूलभूत पदार्थों से सापेक्ष रहकर, यहाँ संकल्पना के लिए बहुत सारे काल्पनिक चित्रों और काल्पनिक दृष्टांतों की पेषकश की गई है।

यह चित्रों का लेखन संक्षिप्त नोट्स के रूप में विद्वानों, पंडितों, और अध्ययनकर्ताओं के पुनरावलोकन तथा दूसरों को अध्ययन करवाने के संदर्भ में तैयार किया गया है, जिसमें श्री लब्धिनिधान श्वे. मू. जैन संघ-आंबली की तत्त्वज्ञान पाठशाला के समृद्धिकरण के रूप में कार्य हुआ। श्रीसंघ ने नए ग्राफिक्स तैयार करवाने के लिए उत्साह दिखाया, जिसके परिणामस्वरूप आज समस्त जैन संघ को कर्मविज्ञान की नई दृष्टि और दृश्य प्राप्त हुए हैं। यदि संघ का साथ मिले तो अन्य अनेक विषयों के लिए भी नए ग्राफिक्स तैयार करवाने की योजना है...

इसमें जो भी उत्तम है, उसका यश जाता है...
कम्मपयडी ग्रंथ का मुझे अध्ययन करवाने की सुचारू व्यवस्था करने के साथ-साथ मेरे अभ्यास विषयक व्यक्तिगत रिपोर्ट प्राप्त कर मुझे इस विषय में निपुण बनाने वाले परम पूज्य सिद्धांत दिवाकर स्व. गच्छाधिपति आचार्य भगवंत श्रीमद् विजयजयघोषसूरीश्वरजी महाराजा को...

कम्मपयडी ग्रंथ की टीका का वांचन करवाने वाले परमोपकारी, मेरे संयमजीवन के सुकानी सहस्रकूटतपाराधक गुरुदेव प.पू. आचार्य भगवंत श्रीमद् विजयसंयमबोधिसूरीश्वरजी महाराजा को....

कम्मपयडी ग्रंथ के अर्थ का अध्ययन करवाने वाले पंडितवर्य पारसभाई को...

इस पुस्तक के सभी ग्राफिक्स Graphiculture वाले हितभाई द्वारा तैयार करवाए गए हैं, इस हिन्दी पुस्तक का डीझाइन वर्क मुमुक्षु जीत (Creative Works) ने बहुत अच्छी तरह से किया है और प्रियंकभाई पंडित की मेहनत से प्रिंटिंग कार्य हुआ है, उन सभी की भी भरपूर अनुमोदना...

इस पुस्तक का हिन्दी भाषांतर गुरुभक्त जय (जामनगर) ने कीया है और उसका संमार्जन रिशि (दादर) ने कीया है, उनकी गुरुभक्ति, श्रुतभक्ति की खूब अनुमोदना।

अंत में संपूर्ण श्रीसंघ को करबद्ध प्रार्थना है कि ऐसे सृजन द्वारा स्वयं/पर का एकांतिक कल्याण हो, कालानुसार सार्थक शासन सेवा करने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हो, ऐसे मंगल आशीर्वाद मुझे प्राप्त हों...

लि. पंन्यास कृपाबोधिविजय
पो.सु.1.
2081

श्रुतज्ञान को सदा मोरी वंदना...

इस पुस्तक का लाभ
प.पू.पं.श्री कृपाबोधिविजयजी म.सा के
गणि-पंन्यास पदवी की
उपज मे से लिया गया है...

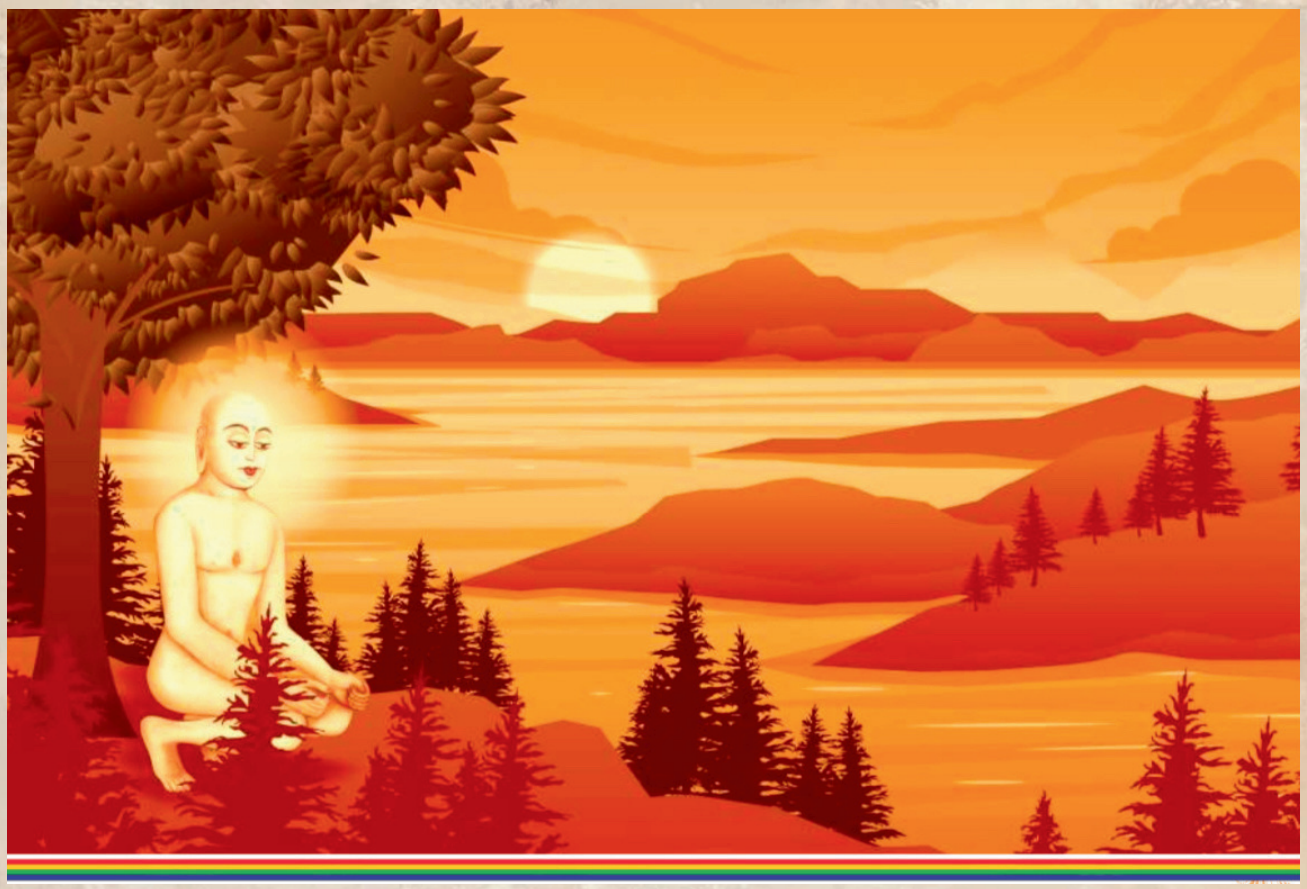

वै.सु. १० की संध्या में ऋजूवालिका नदी के किनारे भगवान महावीरस्वामी को केवळज्ञान की प्राप्ति हुई।

परमात्मा महावीर देव को केवळज्ञान

- पूर्व से तीसरे भव में (२५वें भव में) ११,८०,६४५ मासक्षमण करके विशस्थानक की आराधना से तीर्थंकर नामकर्म निकाचित किया।

- इसी भव में १२.५ वर्ष की साधना-तपश्चर्या द्वारा पूराने कर्म खपाने के बाद वैशाख शुद्ध दशमी के दिन परमात्मा महावीर देव को केवळज्ञान प्राप्त हुआ।

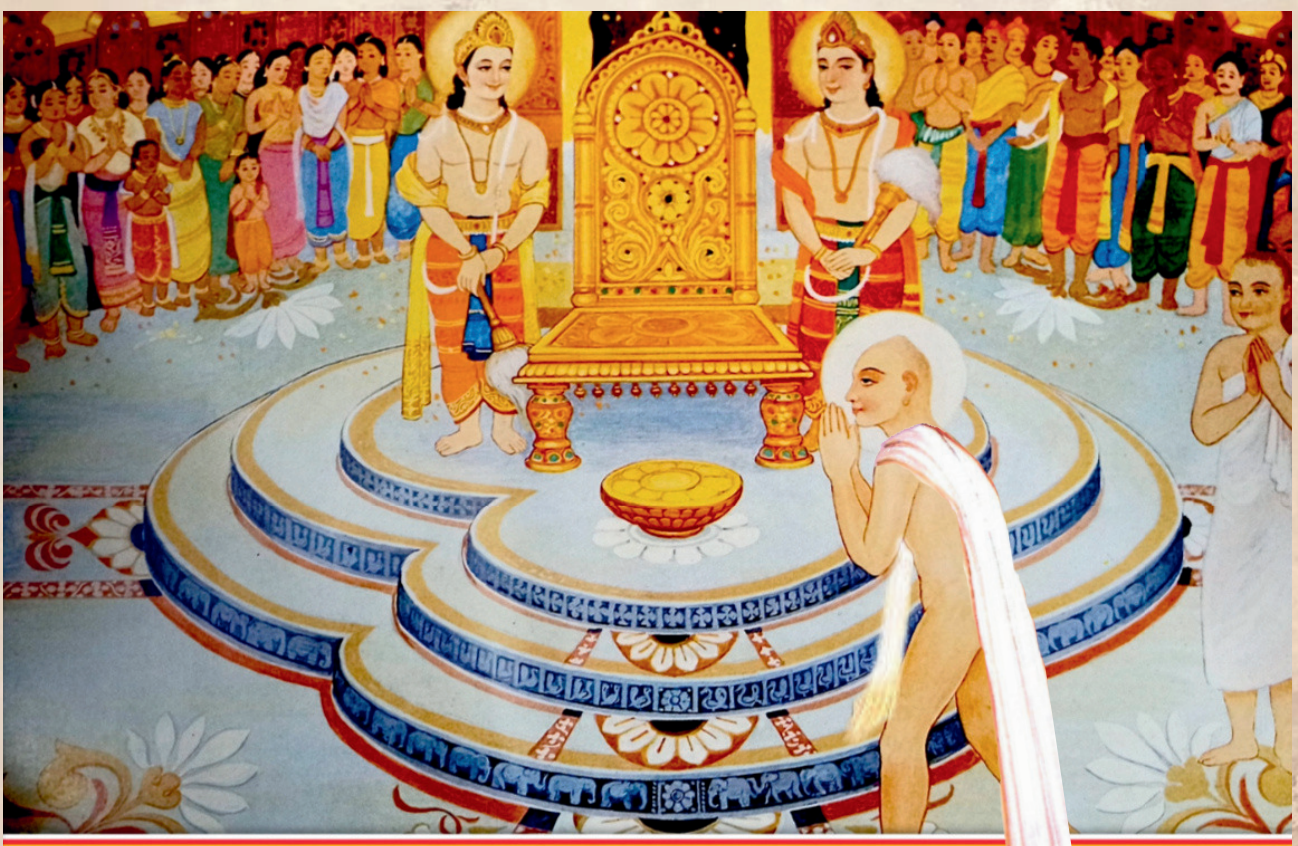

१ योजन - लगभग १३ कि.मी. क्षेत्रफल वाले, २.५ गाँव = लगभग ८ कि.मी. ऊँचाई वाले सोने-चाँदी-रत्नों से निर्मित दैवी समवसरण में अर्थात् ज्ञानदान करने वाली पाठशाला में बिराजमान भगवान महावीर...

तीर्थंकर नामकर्म का उदय शुरू

- उसके प्रभाव से आश्चर्यजनक समवसरण की रचना,
- २.५ गाउँ = लगभग ८ K.M. ऊँचा तथा १ योजन चौडा = लगभग १३ K.M. चौडा, चांदी-सोना-रत्नों के गढ़ से निर्मित समवसरण।
- कुल २०,००० सीढ़ियाँ, विराट अशोकवृक्ष, सिंहासन, ज्हानु प्रमाण पुष्पों आदि से शोभित समवसरण।
- संपूर्ण हवा में (आकाश में) ऊँचे गढ़ और सीढियों से सुशोभित समवसरण में देशना-ज्ञानदान के लिए पधारते हुए परमात्मा...

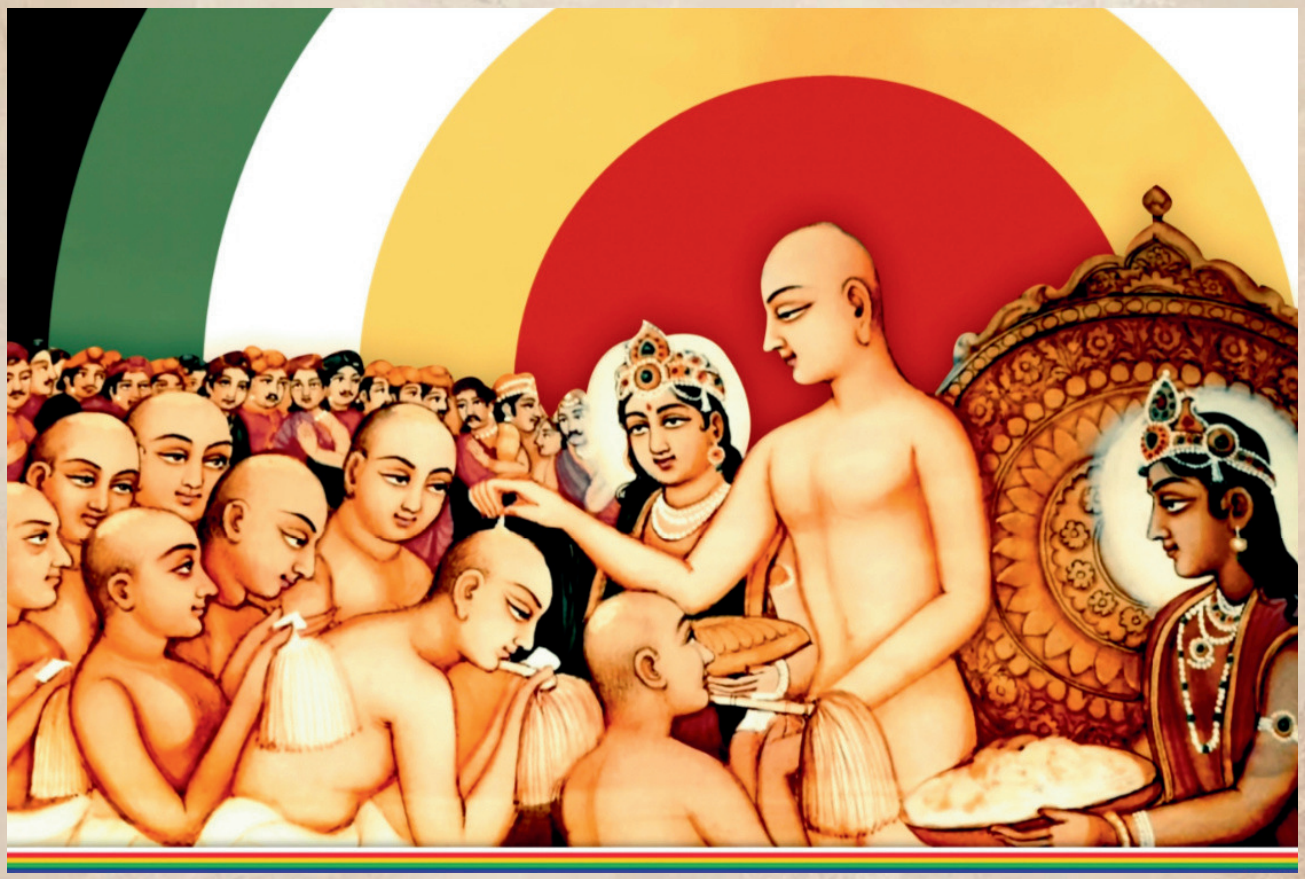

ज्ञान की पाठशाला के मुख्य प्रध्यापकों की तरह नियुक्त होते ११ गणधर और उससे होती आत्मकल्याणकर युनिवर्सिटी (शासन) की स्थापना...

३ प्रदक्षिणा - ३ बार प्रश्न भयवं किं तत्तं ?

- उत्तर : उप्पन्ने इ वा, विगमे इ वा, धुवे इ वा...
- गणधर भगवंतो द्वारा द्वादशांगी की अंतमुहूर्त में रचना-११ गणधरो के ज्ञान पर विश्वासतुल्य वासक्षेप प्रदान करके तीर्थ की रचना...
- सूत्ररचना तीर्थरचना का आधार है।
- सूत्र पर सर्वज्ञ का विश्वास (सीलछाप) तीर्थरचना का स्वरूप है।
- पंचमहाव्रतधारी, समर्पित, वैनयिकी और बीजबुद्धि के स्वामि प्रकृष्ट पुण्य के स्वामि गणधरों को दूसरों को आराधना में जोडने की, उपदेश प्रदान की अनुज्ञा देना यह तीर्थरचना है, इस तरह ज्ञान "महाव्रतधारी गुरुमुखसे" लेने की परंपरा का शुभारंभ हुआ...

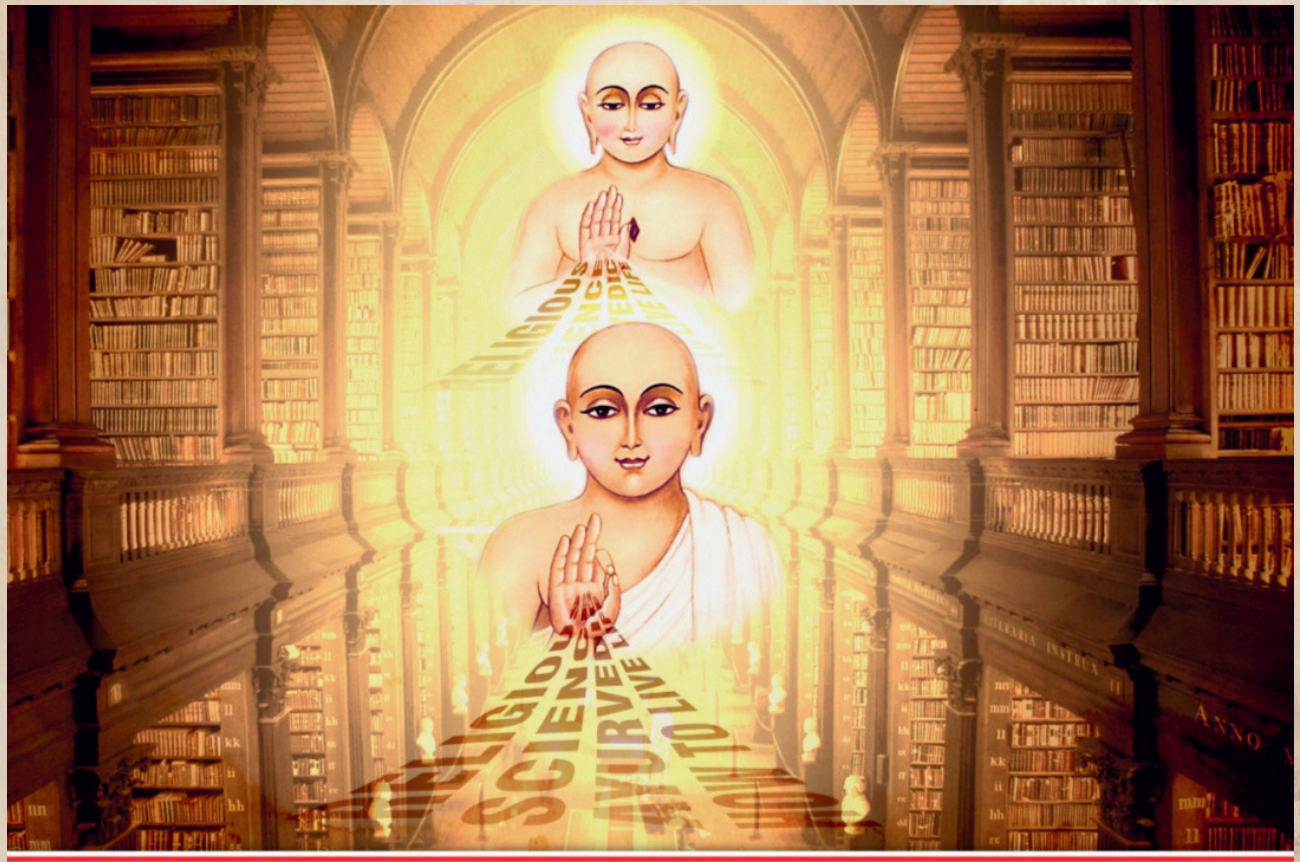

ज्ञान-विज्ञान की सारी शाखाओं को अर्थ (Long Terminology) से बतानेवाले भगवान महावीर... सूत्र (Short Terminology) से बतानेवाले गौतम आदि ११ गणधर...

ज्ञान-विज्ञान का मूल भगवान महावीर की देशना

- प्रभुवीर ३० साल केवली, अंदाजित ३० x ३६० दिन = १०८०० दिन
- रोज की ६ घंटो (२ प्रहर) की देशना १०८०० x ६ = ६४८०० घंटो की देशना में...
- जीवा कहं किलिस्संति ? कहं बज्झंति ? कहं मुच्चंति ? यानि...

  जीव कैसे/ क्यों दुःखी होता है? भव-अटवी में फसता है? छूटता है? इसका समाधान देशनामें अलग अलग तरीकों से दिया। उसमें से ही ज्ञान-विज्ञान की सारी शाखाओं का ज्ञान प्राप्त हुआ।

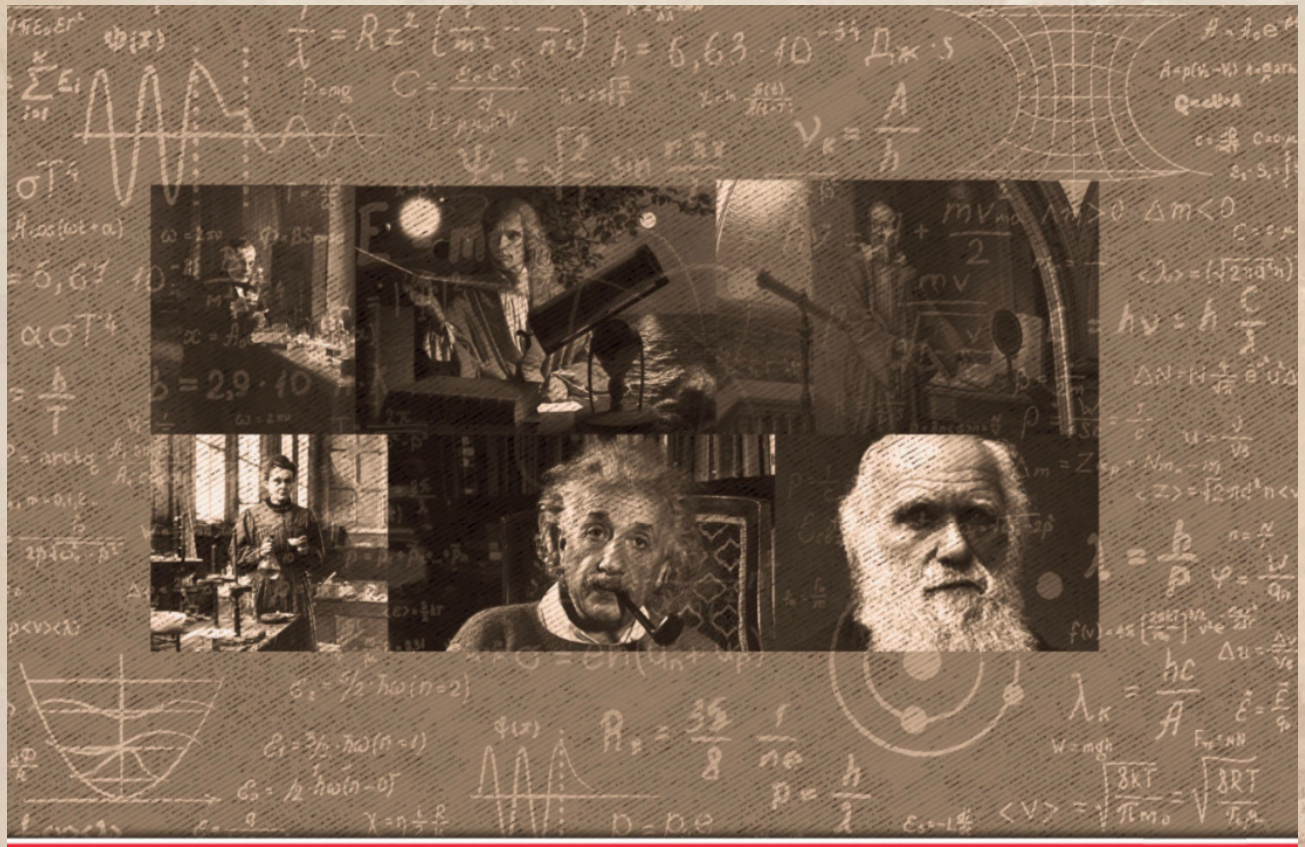

सर्वज्ञ भगवान उपदिष्ट समुद्र में से बिंदुतुल्य ज्ञान को तर्क-प्रयोग और अनुमान से सत्य की तरह घोषित करनेवाले वैज्ञानिक और उनके समीकरण...

Super Scientist
भगवान महावीर

- साधना - निर्मलता - सर्वज्ञता द्वारा श्रुतज्ञान का उपदेश - सर्वज्ञ भगवंत

- प्रयोग-पुरुषार्थ-पैसों के व्यय से बिंदुतुल्य ज्ञान तक पहुंचने का प्रयास - वैज्ञानिक

इसी वजह से भगवान श्रेष्ठ वैज्ञानिक - ज्ञानी महापुरुष है।

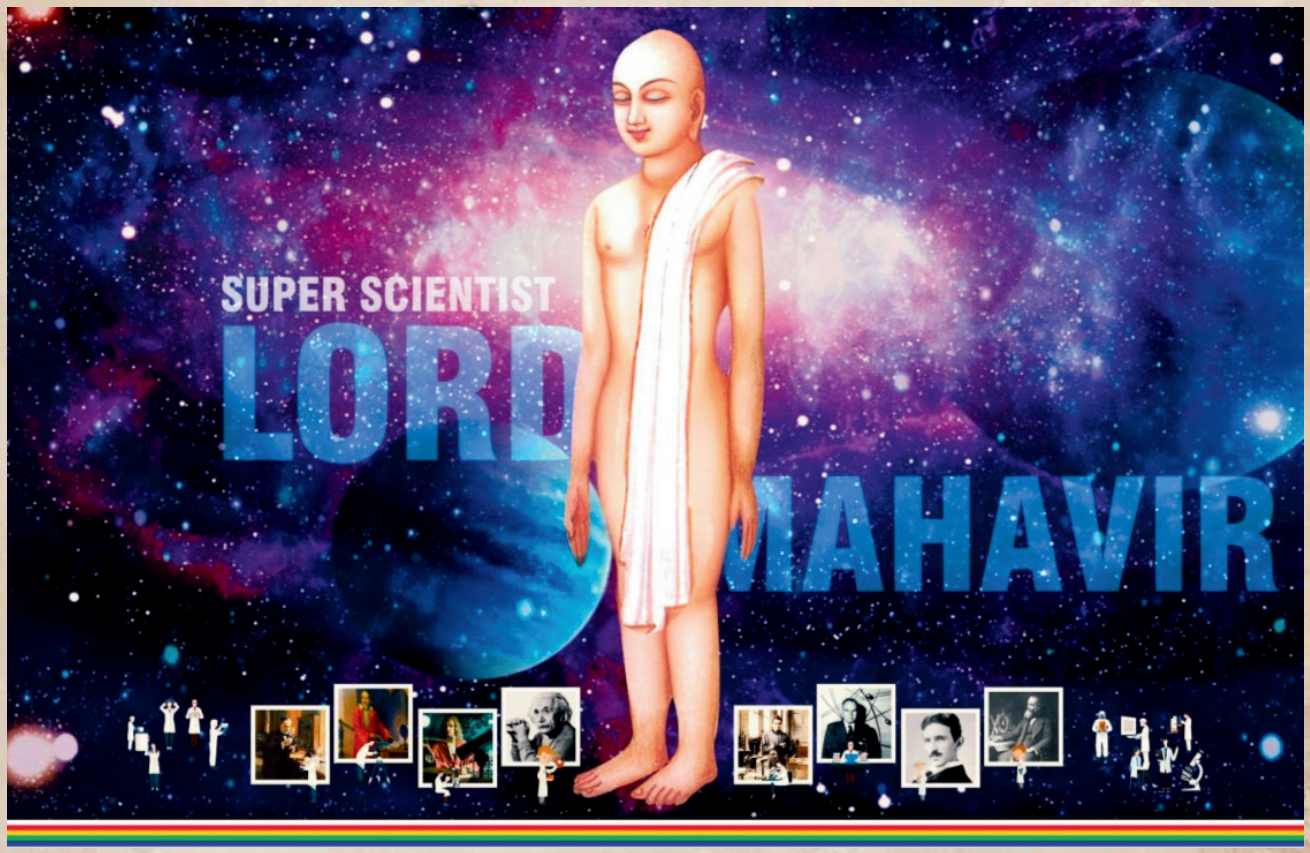

केमेस्ट्री, फिझिक्स, बायोलोजी, एस्ट्रोलॉजी, एस्ट्रोनोमी, मेथेमेटिक्स, आयुर्वेदिक आदि सारी ज्ञान परंपराओ की उत्पत्तिभूमि, सर्वोत्कृष्ट पुण्य, शक्ति बुद्धि-ज्ञान के धारक इस विश्व के SUPER SCIENTIST भगवान महावीर के चरणों में वंदन करके...
आइए ! कर्मविज्ञान विषय के ज्ञान में डूब जाते हैं।

Super Scientist भगवान महावीर

- संपति के त्याग से ज्ञानप्राप्ति - अरिहंत परमात्मा
  सावद्य के त्याग से ज्ञानप्राप्ति - अरिहंत परमात्मा
  सावद्य प्रयोग/संपत्ति समय के व्यय से आंशिक ज्ञानप्राप्ति - वैज्ञानिक

- विज्ञान और धर्म एकदूजे के पूरक हैं
  कारण प्रभु सर्वज्ञ थे, पदार्थ के विज्ञान (विशिष्ट ज्ञान को) जाननेवाले थे। इसलिए पदार्थ के ज्ञान की चरमसीमा तक पहुँचकर अतीन्द्रिय तत्त्वों के भी जानकार थे, तथा उनके सदुपयोग की कला विश्व को बतानेवाले थे।

पूर्वभूमिका

- **विश्व में २ पदार्थ हैं :**

  जीव, अजीव.. जिसमे, जीव है? कैसा है? कितने भेद है? आदि माहिती जीवविज्ञान में आती है, अजीव के ६ भेदों की जानकारी नवतत्व में आती है। यहाँ कर्मविज्ञान में महत्त्वपूर्ण अजीव के भेद पुद्गल विषयक रोचक जानकारी सर्वप्रथम बार प्रस्तुत की जा रही है।

- सर्वप्रथम इस जगत की विचित्रता ही कर्मविज्ञान की सत्यता को साबित करती है। कोई पशु-कोई इन्सान, उसमें भी कोई श्रीमंत-कोई गरीब, कोई रोगी कोई निरोगी, कोई बुद्धिमान तो कोई मूर्ख... ये सारे भेद कोई अगम्य तत्त्व की उपस्थिति/विद्यमानता दर्शाता है जो है कर्म ।

- **श्रीपाल राजा :**

  छोटी आयु, पिता की मौत-जंगल में गमन-कुष्ठ रोगवाले व्यक्तियों के समूह में गमन-मयणा के संग विवाह-निरोगिता-विराट सैन्य के स्वामि-इतनी विरोधीभासी घटनाएँ एक व्यक्ति के जीवन में घटित हुई, कारण क्या?

- **बिपिन रावत :**

  भारत के सर्वप्रथम CDS - भारत की सुरक्षा करनेवाले खुद की सुरक्षा नहीं कर पाए कारण क्या?

- **रानु मंडल :**

  भिखारिन में से Top Singer बनी, फिर गुमनामी के खड्डे में गिर पडी-कारण क्या?

- **अर्जुन :**

  श्रेष्ठ धनुर्धर होने के बावजूद भी नपुंसक के गुप्तवेश में कलाचार्य बनकर रहना पडा-कारण क्या?

- **सुशांतसिंह राजपूत :**

  युवानों को पसंद आए ऐसी Personality के धारक, भौतिक जीवन में सफल सुशांतसिंह डिप्रेशन के Patient बनकर आत्महत्या कर चुके कारण क्या?

इन सब का चालकबल कर्मविज्ञान को समझना अत्यंत जरुरी है।

भूतकाल = Reason (जो हुआ उसका कारण)

भविष्य = Result (जो कर रहा हूँ उसका परिणाम) जानने के लिए कर्मविज्ञान का ज्ञान जरुरी है।

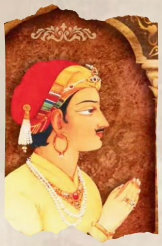

सब से स्थूल कद के पुद्गल याने, औदारिक मेटर, जिस मेटर के उपयोग से पृथ्वी-पानी अग्नि-वायु-वनस्पति- विविध जीवसृष्टि और मनुष्य खुद का शरीर बनाते हैं।

१) औदारिक पुद्गलः

- अजीव के उपभेद पुद्गल संबंधित रोचक जानकारी जिनशासन में मिलती है।
- मुख्यतः ८ प्रकार के पुद्गल (मेटर) १४ राजलोक में माने जाते हैं। अनंत पुद्गलों के जत्थे को स्कंध कहते हैं।
- जीव ऐसे अनेक पुद्गल स्कंधो को निरंतर ग्रहण करता है। वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, शब्द ये पुद्गल के गुणधर्म हैं। औदारिक पुद्गल सबसे स्थूल पुद्गल होते हैं।
- इनसे मनुष्य, तिर्यंच (एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय) का शरीर बनता है।
- वर्तमान में जो दिख रहा है, जो चख सकते हैं, जो सूंघ सकते हैं, जिसका स्पर्श किया जा सकता है, वे सारे औदारिक पुद्गल हैं।
- पिरियोडिक टेबल में दिए गए सारे केमिकल, धातुएँ औदारिक पुद्गल है। इनके संयोग से नए Products बनते हैं।
- उ.दा. Na-Sodium, Cl-Chloride, NaCI-नमक (सोडियम क्लोराइड)
  यह औदारिक पुद्गल जीव रहित हों तो सचित्त कहे जाते हैं।

औदारिक से सूक्ष्म कदके तथा ज्यादा चमकीले मेटर यानी वैक्रिय मेटर, जिसमें देवता - नारकी, लब्धिधारी मनुष्य - तिर्यंच का शरीर बनता है और जिसका सायक्लोन के समय वायुकाय के जीव भी उपयोग करते हैं।

२) वैक्रिय पुद्गल :

- ४ प्रकार के देवों और नरक के जीवों को ऐसा शरीर होता है।
- एक शरीर से ज्यादा जो भी रूप बन सकते हैं वे वैक्रिय रूप होते हैं।
- आज के समय में जो भी देव देवी, चक्रेश्वरीजी, पद्मावतीजी, सरस्वतीजी, मणीभद्रजी, नाकोडा भैरवजी, घंटाकर्णजी आदि की प्रतिकृति प्राप्त है वे उत्तरवैक्रिय (दूसरा रूप) शरीर है। मूल रूप देवलोक में होता है, वह वैक्रिय शरीर कहलाता है। यहाँ आने के लिए जो दूसरा रूप लिया जाता है, वह उत्तर वैक्रिय कहलाता है।
- जिस तरह बड़े पत्थरों के बीच से छोटे कंकर निकल जाते हैं उसी तरह वैक्रिय पुद्गल भी औदारिक पुद्गलों से ज्यादा सूक्ष्म होने के कारण औदारिक रचना के छेदों से निकल सकते हैं।
- नरक के जीवों के शरीर के वैक्रिय पुद्गल पारे के समान होते हैं। इसी वजह से वे अलग होकर फिर जुड जाते हैं। वैक्रियलब्धियुक्त मनुष्य और पंचेन्द्रिय तिर्यंच अन्य रूप (उत्तरवैक्रिय शरीर) बनाने के लिए वैक्रिय पुदगलों का उपयोग करते हैं। बादरपर्याप्ता वायुकाय के जीव भी यह शरीर बनाते हैं। उदा. झंझावात...

समवसरण की ऋद्धि देखने के लिए या संशय का निवारण करने हेतु १४ पूर्वी साधु इस आहारक मेटर के उपयोग से नया तेजस्वी शरीर बनाते हैं।

३) आहारक पुद्गल :

- वैक्रिय से ज्यादा सूक्ष्म चमकदार पुद्गल।
- मात्र १४ पूर्वधर साधु ही इन पुद्गलों का उपयोग करते हैं।
- वैभवों से निर्मित, अतिशयों से जन्य भौतिक ऐश्वर्ययुक्त समवसरण की रचना इतनी भव्य होती है कि वैरागी साधु उसे देखने जाते हैं।
- इससे वीतराग की ओर तीव्र अहोभाव और वीतरागता के लिए वैरागी साधु का पुरुषार्थ बढ़ता है। १४ पूर्व के ज्ञान में कहीं पर प्रश्नोद्भव हो तो जिज्ञासा का समाधान करने के लिए तीर्थंकर के समीप जाने हेतु ये पुद्गलों का उपयोग होता है।
- प्रश्नों की जिज्ञासा १४ पूर्वी को भी उठती है और समाधान के लिए अन्य प्रदेश या क्षेत्र में जाकर भी वे समाधान प्राप्त करते हैं। हमे भी जिज्ञासा जागृत करके गीतार्थ गुरुभगवंत के पास समाधान प्राप्त करना चाहिए।

कोई भी जीव-अजीव की एक Energy-Aura होती है, जिसके निर्माण हेतु तैजस मेटर उपयोगी बनता है, यह Body Temperature एवं पाचनशक्ति को maintained रखता है।

४) तैजस पुद्गल :

- आहारक पुद्गलों से ज्यादा एक दूसरे से करीब एवं सूक्ष्म पुद्गलों का समूह है।
- शरीर के एक निश्चित तापमान को टिकाए रखनेवाला तत्व तैजस पुद्गल।
- खाने के पाचन में सहायक तत्व-तैजस पुद्गल।
- तैजस पुद्गलों के समूह से तैयार होनेवाला तैजस शरीर अनादिकाल से (निगोद से) जीव के साथ जुड़ा हुआ होता है, जो निर्वाण तक जुड़ा रहता है।
- आज जिसको औरा-एनर्जी का नाम दिया जाता है, उसमें भी ये पुद्गल उपयोगी होते हैं।
  आन औरा-आभामंडल के photo ले सके ऐसे मशीन विकसित हुए हैं, जिससे तैजस पुद्गल परोक्ष रूप में प्रत्यक्ष हुए है।
- हर एक विचार, वर्तन से उठनेवाले आभामंडल की असर अनेक जीवों तक एवं लंबे समय तक पहुँचती है।
- शीतलेश्या - तेजोलेश्या के लिए भी यही पुद्गल सहायक हैं।
  कुछ विद्वानों के मतानुसार आभामंडल एनर्जी का समावेश औदारिक पुद्गलों में भी होता है। बहुश्रुतों के पास इसका निर्णय करना चाहिए।

संवेदनाओं को स्वर द्वारा व्यक्त करने में सहायक मेटर याने भाषा पुद्गल स्पष्ट और अस्पष्ट स्वर दोनों भाषा मेटर के विकसित और अविकसित स्वरूप हैं।

५) भाषा पुद्गलः

- तैजस से भी ज्यादा सुक्ष्म यह पुद्गल हैं।
- अवधिज्ञान द्वारा जीव को तथा स्वभाव से सर्वप्रथम तैजस एवं भाषा के पुद्गलों के बीच की Range के पुद्गल का ज्ञान होता हैं।
- यह पुद्गल श्रोत्रेन्द्रिय से ज्ञात होते हैं तथा स्पष्ट अस्पष्ट भाषा से व्यक्त होता ध्वनि भाषा वर्गणा के पुद्गल में से पैदा होता है... भिन्न भिन्न उच्चार जैसे की अ, ब, क, A, B, C आदि में निहित कुछ साम्यता के कारण मशीन से एक भाषा का अन्य भाषा में Conversion मुमकिन है... जो पूर्वकाल में प्रभु के अतिशय से समवसरण में होता था।
- अभी मात्र मनुष्य की भाषा में conversion संभवित है, प्रभु के अतिशय से तिर्यंचों और देवों की भाषा में भी Conversion होता था। इसके अतिरिक्त भाषा के पुद्गल को एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचा सकते है, इसी वजह से Mobile का आविष्कार हुआ।
- लिखित अक्षरों की जननी औदारिक पुद्गल है, सुने जानेवाले बोले अक्षरों की जननी भाषा वर्गणा के पुद्गल है। मशीन द्वारा ध्वनि तरंगों को आज पकड़ा भी जाता है और संग्रहित भी किया जाता है। उदा. Heartbeats, Recording....

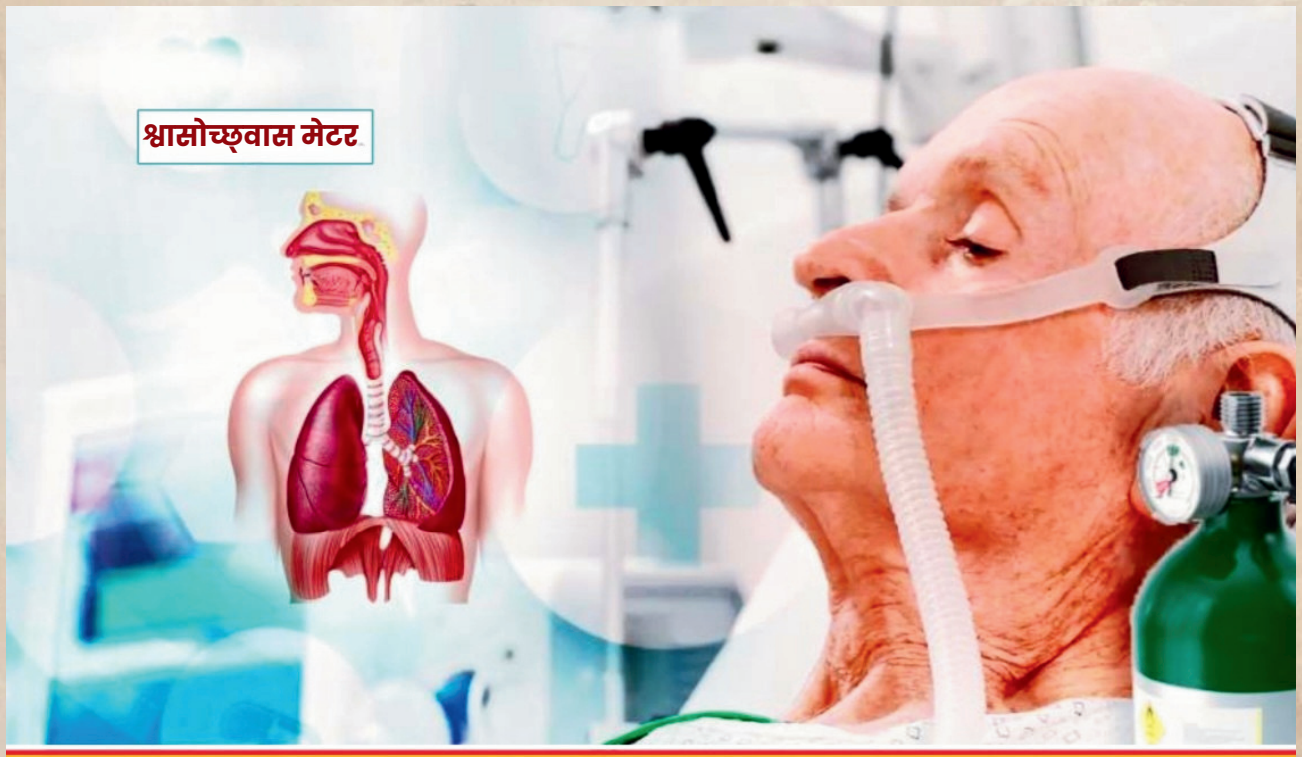

कोई भी देह को संभालने/टिकाने के लिए प्रत्येक अवयवों की शुद्धि और पुष्टि के हेतु आवश्यक श्वसनतंत्र को जरुरी प्राणवायु पहुंचाने का काम श्वासोच्छ्वास मेटर करता है।

६) श्वासोच्छ्वास पुद्गलः

- भाषा से ज्यादा सूक्ष्म, कार्य से प्रत्यक्ष... लेकिन रूप से अप्रत्यक्ष ये पुद्गल होते हैं।
- श्वासोच्छ्वास हेतु जीव ये पुद्गलों का उपयोग करते हैं।
- श्वसनतंत्र के द्वारा जीव को प्राणवायु पहुंचाने का कार्य ये पुद्गल करते हैं।
- श्वासोच्छ्वास पुद्गलों के द्वारा भिन्न भिन्न जीव खुद को जरुरी ऐसे प्राणवायु को ग्रहण करके शरीर के हर एक अंग तक पहुंचाते हैं। (जिसकी मदद से Blood Circulation आदि भी होता है)
- दुनिया में प्राणवायु नाम से प्रसिद्ध Oxygen औदारिक वर्गणा के पुद्गलों से बनता है, यह भी श्वसन क्रिया में उपयोगी है, परंतु मुख्य रूप से श्वासोच्छ्वास मेटर जो अति सूक्ष्म है वह चक्षु से / स्पर्श से अगम्य है फिर भी उन्हीं पर श्वसन क्रिया निर्भर है ऐसा श्री भगवती सूत्र में कहा गया है।
- घ्राणेन्द्रिय जिनको नहीं है वैसे भी जीव स्पर्शेन्द्रिय द्वारा प्राणवायु को अवश्य ग्रहण करते हैं।
- एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीव अगर आहार-शरीर-इन्द्रिय पर्याप्ति पूर्ण करके नए भव का आयुष्य बाँधकर मृत्यु
- प्राप्त करते है तो श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति पूर्ण न होने के कारण श्वसन क्रिया का अभाव संभव है।
- श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति पूर्ण होने के बाद सारे जीवों की श्वसन क्रिया निरंतर चलती है। इसलिए श्वासोच्छ्वास पुद्गल उसमें उपयोगी बनते हैं।

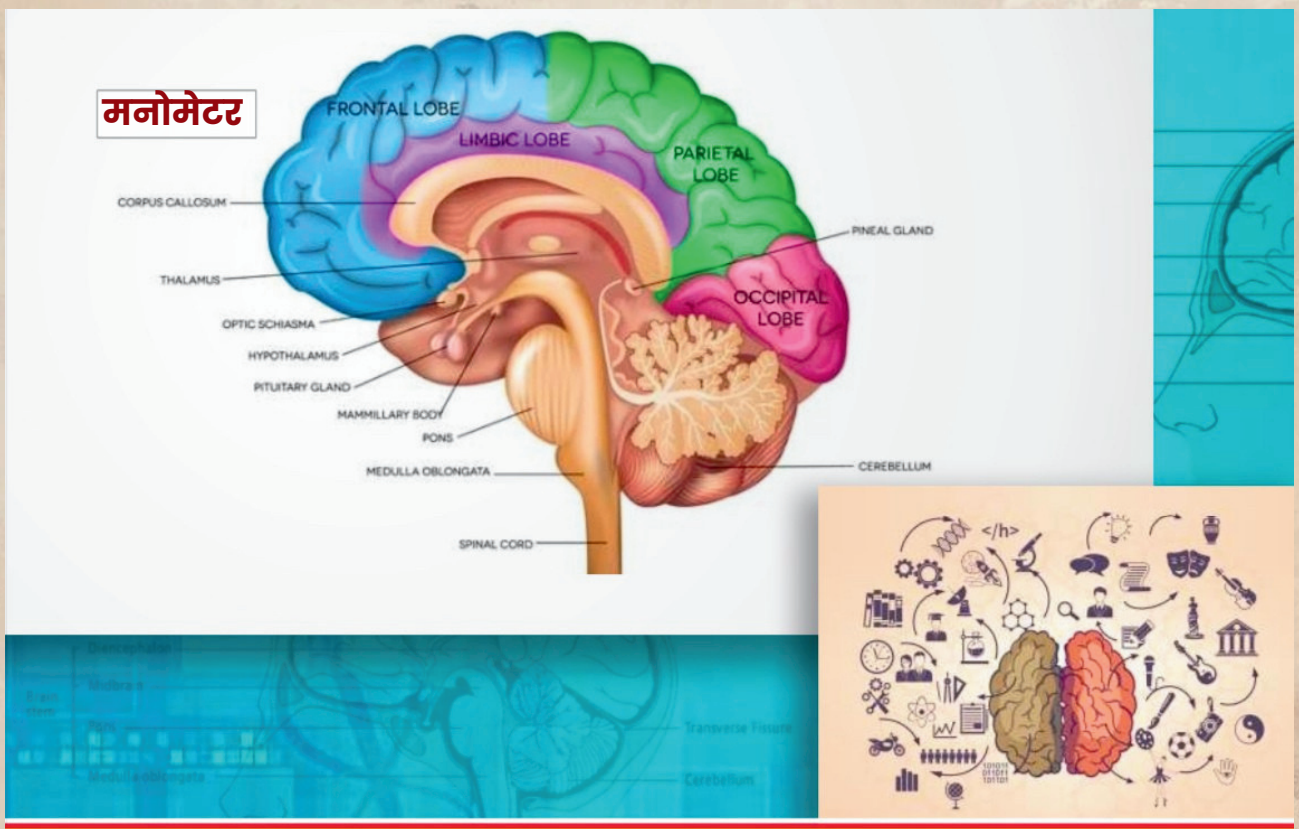

प्रत्येक अच्छे-बुरे खयालों की positive-negative असर होती है। उन विचारों की प्रक्रिया में आवश्यक मेटर याने-मनोवर्गणा के पुद्गल। प्रत्यक्ष ना होने के बावजूद भी उनकी असर स्पष्ट दिखती है, इसलिए ही इस मेटर का स्वीकार विज्ञान भी करता है।

७) मनोवर्गणा के पुद्गल

- श्वासोच्छ्वास से ज्यादा सूक्ष्म तथा अधिक शक्तिशाली पुद्गल।
- विचारों के द्वारा आत्मा के शुभ - अशुभ अध्यवसाय को प्रस्तुत करने में सहायक पुद्गल... (संज्ञी जीव ही आत्मा के शुभ-अशुभ अध्यवसायों को इन पुद्गलों के उपयोग से स्पष्ट रूप से व्यक्त कर सकते हैं)
- विचारों की असर से जीव रोगी - निरोगी, हताश - उत्साहित, सुखी - दुःखी बन सकता है।
- चाइना एवं जपान के प्रयोग में:
  अशुभ विचारों से मन में Black Counts उठते हैं,
  शुभ विचारों से मन में White Counts उठते हैं।
- यह जिनशासन के लेश्या के ज्ञान का समर्थन करता है। यहाँ ध्यान रहे कि द्रव्यलेश्या के पुद्गल औदारिक पुद्गल के होते है।
- विचार संस्कार के आधीन है। संस्कार आत्मा में है इस कारण से आत्मा की शुद्धि से मन की एवं तन की भी शुद्धि होती हैं ।
- आधुनिक विज्ञान Spect मशीन के द्वारा मनोवर्गणा के पुद्गलों को तो नहीं परंतु मनोवर्गणा के पुद्गलों या विचारों से दिमाग में होते हुए परिवर्तनों को पहचान सकता है।

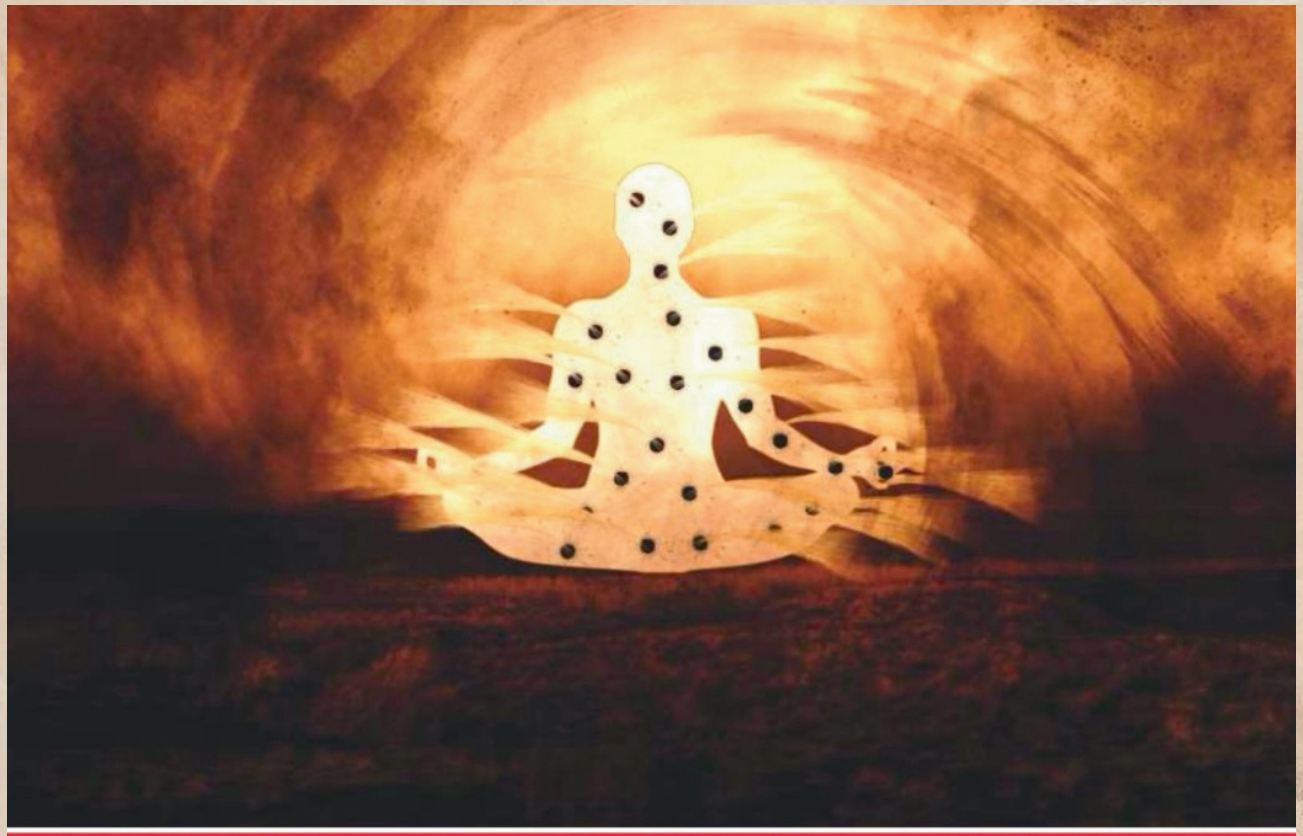

इस विश्व के सूत्रधार तथा संचालक का रोल निभानेवाला मेटर याने कार्मण पुद्गल, यह मेटर जीव पर प्रभाव डालकर जीव को भौतिक सुख-दुःख का अनुभव करवाता है।
इसी कारण इस मेटर का ज्ञान अत्यंत आवश्यक है।

८) कार्मण पुद्गल :

- सबसे सूक्ष्म तथा पावरफुल पुद्गल।
- ये पुद्गल जीव की मलिनता के कारण जीव के साथ जुड़ जाते हैं और कर्म का स्वरूप ले लेते हैं।
- यह एक प्रकार का Programming है जिससे जीव सुख-दुःख आदि की प्राप्ति करता है।
- यह कर्म जिस तरह के प्रोग्रामिंग से आत्मा में चिपके हैं उसका प्रभाव शुरु होते ही जीव को तथाप्रकार के निश्चित विचार-वर्तन में खींच ले जाते हैं और नए कर्मों का प्रोग्रामिंग ज्यादा Speed से करवाते हैं। इन कर्मों से ही संसार विद्यमान है-स्वजन, सामग्री, रूप, शक्ति आदि चीजों की प्राप्ति भी कर्म के Programming अनुसार होती है।

- ये कर्म जीव को कैसी वाणी (भाषा पुद्गल), कैसा शरीर (औदारिक पुद्गल), कैसे विचार (मनो पुद्गल), कैसी ओरा (तैजस पुद्गल) आदि मिलेगे ? यह तय करता है तथा सारे प्रकार के पुद्गलों का सर्जन, संचालन, संरक्षण तथा विसर्जन करने में उपयोगी बनता है।

- ये कार्मण पुद्गल जो आत्मा से जुड़ते हैं/चिपकते है उनको कार्मण शरीर कर्म = कहते हैं, जो अनादि निगोद से अनंतकाल तक (मोक्ष प्राप्ति तक) साथ रहते हैं।

- जिस तरह कर्म की अन्य पुद्गलों पर असर होती है उसी तरह अन्य पुद्गलों की भी कर्म पर असर होती है। इसी कारण से ही पुरुषार्थ-साधना-आराधना द्वारा कर्म पुद्गलों से मुक्ति संभवित है। उदा. Crocin गोली लेने से (औदारिक पुद्गलों से) अशाता वेदनीय कर्म कुछ काल के लिए टळ जाता है या नाश होता है आदि...

- इस तरह ये पुद्गल, उसके कार्य और जीव पर उनकी असर सर्वविदित है। प्रश्न यह उठता है कि जीव अरूपी है और पुद्गल रूपी तो दोनों का संयोग कैसे हुआ ?

- जीव कर्म से जुडता है यह बात उचित है, पर कर्म जीव से चिपकते हैं उसका कारण क्या ? जीव की कहाँ गलती हुई या कहाँ वह चूक गया कि निरंतर कर्म बाँधकर दुःखी हो रहा है?

- अनंत गुणयुक्त जीव क्यों/किस कारण कर्म से बंधता है ?

  याद रहे... Artificial Intelligence यानि Robot निर्जीव होने के बावजूद भी Programming से उसका सर्जन Programmer करता होता है, और वही Robot खुद के सर्जक को प्रभावित कर सकता है। उसी तरह मोहयुक्त जीव ने जो प्रोग्रामिंग किया है उससे कर्म नामक Robot का सर्जन हुआ है, और यह जीव के वीर्य से तैयार होने के कारण उसको यानि जीव को प्रभावित भी करता है। कर्म का सर्जक जीव का मलिन वीर्य क्या है यह जानने के लिए प्रस्तुत है- **Session-2**

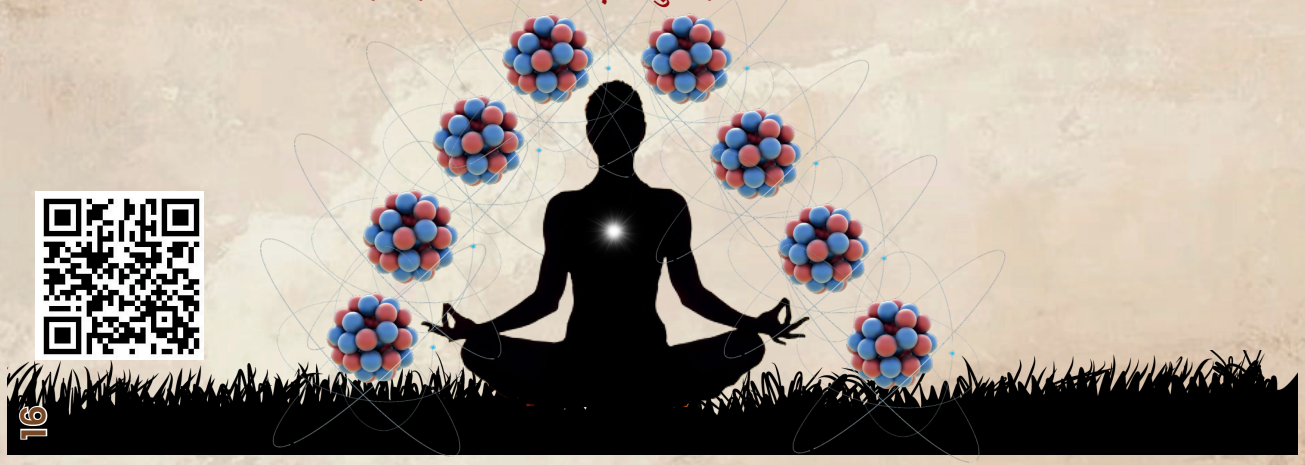

अनादि काल से चार मलिनताओं से युक्त जीव को कार्मण के Matter चिपककर कर्मों में Convert हो जाते हैं।

१) कर्मबंध के कारणों की समज :

- मिट्टि और सोना अनादिकाल से एकसाथ ही होते हैं। पत्थर मूर्ति का Raw-Material है और दोनों साथ ही होते हैं। उसी तरह अशुद्ध आत्मा तथा निर्मलता यानी शुद्ध आत्मा अनादिकाल से साथ ही है।
- आँसु आँखो में उत्पन्न होते हैं, बाहर से नहीं आते, उसी तरह आत्मा में अनादिकाल से मिथ्यात्व, अविरति, कषाय, योग स्वरूपी मलिनता है जो बाहर से नहीं आती है, बल्कि पहले से आत्मा में ही होती है।
- मिथ्यात्व आदि आत्मा में ही उत्पन्न होते हैं यानी ये बाहर से नहीं आए, परंतु अनादिकाल से हैं ही...
- मिथ्यात्व+ = मिथ्यात्व, अविरति, कषाय, योग = दलदल जैसा जीव
- अविरति+ = अविरति, कषाय, योग = कीचड़ जैसा जीव
- कषाय + = कषाय, योग = गीली मिट्टि जैसा जीव
- योग = मन, वचन, काया की शुभाशुभ प्रवृत्ति = रेत जैसा जीव

- मिथ्यात्व = ५ भेद
- अविरति = ६ अव्रत, ५ इन्द्रिय, मन पर अनियंत्रण १२ भेद
- कषाय = ४ भेद
- योग = १५ भेद = मन के ४, वचन के ४, काययोग ७
- मन-वचन के योग के भेद =
  सत्य मनोयोग, असत्य मनोयोग, सत्यासत्य मनोयोग, असत्य-अमृषा मनोयोग
  सत्य वचनयोग, असत्य वचनयोग, सत्यासत्य वचनयोग, असत्य अमृषा वचनयोग
- काययोग =
  औदारिक, औदारिक मिश्र, वैक्रिय, वैक्रिय मिश्र, आहारक, आहारक मिश्र, कार्मण योग - ७ भेद
- गरमी के कारण दलदल का कीचड में - गीली मिट्टि में - रेत में स्वरूपांतरण हो सकता है उसी तरह साधना की गरमी से जीव भी मिथ्यात्व+, अविरति+, कषाय+, योग से मुक्त होकर निरंजन निराकार बनकर पूर्ण बनता है।
- दलदल में से कीचड़, गीली मिट्टि या रेत जैसा जीव बना मतलब कर्मबंध मंद-मंदतर-मंदतम होते गए...

मिथ्यात्व, अविरति तथा कषाय से रहित मात्र मन-वचन-काया की प्रवृत्ति वाला जीव रेत से भरे ग्लास जैसा बनकर इर्यापथिकी कर्मबंध करता है।

२) मात्र योग = मन-वचन काया की शुभ-अशुभ प्रवृत्तिः

- मिथ्यात्व, कषाय, अविरति से रहित मात्र योग मन-वचन काया की शुभाशुभ प्रवृत्ति...
- ऐसी प्रवृत्ति ११, १२, १३ वे गुणस्थानक पर होती है।
- अधिकतर केवलज्ञान की प्राप्ति हो = १३ वे गुणस्थानक पर मात्र योग से कर्मबंध होता है।
- इसे इर्यापथिकी कर्मबंध कहते हैं = १ ले समय बंधते हैं, २ रे समय उपभोग, ३ रे समय निर्जरा। जैसे रेत में गिरती हुई कोई वस्तु तुरंत ही शुद्ध हो जाती है अलग हो जाती है, उसी तरह चिकनेपन से रहित रेत जैसा आत्मा कर्म से जुड़कर तुरंत उसका भोग कर के अलग हो जाता है।
- उदाहरण-१) पुष्पचूला साध्वीजी भगवंत
  आर्णिकापुत्र आचार्य की सेवा में -(काययोग की प्रवृत्ति) केवलज्ञान-बारिश में गोचरी जाने के लिए डाँटा-अचित्त जल में गोचरी-आचार्य के द्वारा केवली की माफी-व्यवहार से अशुद्ध पर निश्चय से शुद्ध आचरण के कारण कर्मबंध नहीं।

- यह भूमिका ११-१२-१३ वे गुणस्थानक के लिए ही है।
- इस तरह अत्यंत निर्मल (मिथ्यात्वादि से रहित) आत्मा का विशेष कारण से व्यवहार थोडा अलग होता है, बाकि तो वे भी सदाकाल शुद्ध धर्माचार का ही पालन करते हैं।
- उदा. २) तीर्थंकर परमात्मा की धर्मदेशना :
  (वचनयोग की प्रवृत्ति) १ ले समय पर कर्मबंध-(पुण्यकर्म) शातावेदनीय का बंध, २ रे समय पर उसका उपभोग और ३ रे समय पर निर्जरा...
- उदा. ३) अवधिज्ञानी अनुत्तरवासी देवो के संशय निवारण हेतु केवलज्ञानी द्वारा उत्तर दिया जाए तब-
  (मनोयोग की प्रवृत्ति) १ ले समय पर कर्मबंध-(पुण्यकर्म) शातावेदनीय का बंध, २ रे समय पर उसका उपभोग और ३ रे समय पर निर्जरा ।

क्रोध आदि कषाय के परिणामों से प्रभावित मन-वचन-काया की प्रवृत्ति से यानी कषाय + योग युक्त जीव गीली मिट्टि से भरे ग्लास जैसे होते हुए थोडा ज्यादा कर्मबंध करता है।

३) गीली मिट्टि जैसे जीव :

- मन-वचन-काया की प्रवृत्ति में कषाय मिल जाए तो जीव गीली मिट्टि जैसा बन जाता है और थोडे दीर्घ पाप कर्मों का बंध होता है। ज्यादातर ऐसे जीव ६-७-८-९-१० वे गुणस्थानक पर होते हुए संज्वलन कषाययुक्त सर्वविरति गुणस्थानक पर होते हैं।
- कषाय १० वे गुणस्थानक पर नाश होते हैं इसलिए तब तक सारे जीवों में क्रोधादि दोष थोड़े-ज्यादा अंश में रहते हैं।
- इस तरह से १० वे गुणस्थानक तक के जीवों में कषायों का उदय, क्षयोपशम रह सकता है- क्षय १० वे गुणस्थानक के अंत में होता है।
- क्रोधः अप्रीति, अरुचि...
- मानः स्वोत्कर्ष, पर-अपकर्ष...
- मायाः अंदर से अलग, बाहर से कुछ और...
- लोभः नया इकट्ठा करने की इच्छा, पुराना संभालने की चिंता... यानी मनपसंद तत्त्वों में आसक्ति...
- इन गुणस्थानक पे जीव संख्यात सागरोपम की उत्कृष्ट स्थिति का बंध करता है।

कभी अटकना = To Stop मतलब विरति... उसका अभाव यानी अविरति युक्त (यानी अविरति, कषाय और योग से युक्त) जीव कीचड़ का प्रतिनिधित्व करते हुए गाढ कर्म बाँधता है।

४) कीचड़ जैसा जीव :

योग में कषायों के साथ अविरति (देशविरति) भी जुड़े तो जीव कीचड़ जैसा बन जाता है।

- ४-५ वे गुणस्थानक पर अविरति (देशविरति) भी होती है यानी जीव कीचड़ जैसा बन जाता है... प्रत्याख्यानीय और अप्रत्याख्यानीय कषायों के भी होने से ज्यादा तीव्र दीर्घ कर्म का बंध होता है।
- अविरति यानी पापत्याग के पच्चक्खाण का अभाव...
- अविरति मतलब करे-करवाए बिना भी अनुमति के पाप का स्वीकार....
- अविरति = ६ प्रकार के जीवनिकाय की हिंसा (जयणा का अभाव)
- ५ इन्द्रिय तथा मन से होते हुए पाप, कुल १२ भेद...
- यह गुणस्थानक पर जीव उत्कृष्ट से अंतः कोटाकोटी सागरोपम की स्थिति का बंध करता है।

१) अहित में हित की, हित में अहित की... २) दुःख में सुख की, सुख में दुःख की...
३) अकल्याणकर में कल्याण की, कल्याणकर में अकल्याण की बुद्धि याने मिथ्यात्व...
दलदल के प्रतिनिधि जैसा यह जीव अति गाढ कर्म बाँधता है, मात्र गलत अच्छा लगे तथा
अत्यंत अच्छा लगे यह है - आभिग्रहिक मिथ्यात्व... गलत के साथ सच्चा भी पसंद आए यह है - अनाभिग्रहिक मिथ्यात्व...

५) दलदल जैसा जीव :

मिथ्यात्व + = कषाय, अविरति, योग में मिथ्यात्व का मिलना...

- अति तीव्र कर्मबंध, अनंतानुबंधी कषाय और मिथ्यात्व की उपस्थिति से जीव दलदल जैसा बनता है।
- ऐसे जीव १ ले या तो २ रे गुणस्थानक पर होते हैं।
- पहले गुणस्थानक पर रहे जीव का योग अच्छा होने के बावजूद भी मिथ्यात्व की उपस्थिति होने से कर्मों का अपेक्षा से गाढ बंध होता है, अगर योग अच्छा ना हो तो अतिगाढ कर्मबंध होता है।
- इस गुणस्थानक पर रहा हुआ जीव उत्कृष्ट से ७० कोटाकोटी सागपरोम तक के कर्मों का बंध करता है।
- मिथ्यात्व के पाँच प्रकार हैं:

१) आभिग्रहिक : गलत स्थान पर है-गलत पकड होती है।

उदा. नास्तिकवादी, बौद्ध, सांख्य, आतंकवादी, खुद के तीव्र दोषों को Justify करनेवाले जीव...

२) अनाभिग्रहिक : स्थान गलत होता है, पर गलत पकड नहीं होती।

उदा. सुदेव आदि को भी नमन करता हुआ अन्य परंपरा का श्रद्धालु...

सही बात का दुराग्रह यानी आभिनिवेशिक, एकाद तत्त्व पर शंका यानी सांशयिक मिथ्यात्व तथा निगोद आदि एकेन्द्रिय जीव को without intence होता अनाभोगिक मिथ्यात्व...

मिथ्यात्व के शेष प्रकार :

३) आभिनिवेशिक : अच्छे स्थान पर है... पर गलत की पकड है...

उदा. जमाली, गोष्ठामाहिल आदि निह्नव, शिवभूति आदि एकांतवादी....

४) सांशयिक : कोई-कोई जिनवचन पर शंका-ऐसा हो सकता है ?

उदा. आत्मा है या नहीं ? पुण्य पाप आदि हैं या नहीं? स्वर्ग-नर्क-परलोकादि हैं या नहीं? आदि संशयवाला जीव...

५) अनाभोगिक मिथ्यात्व : संस्कारों के कारण साहजिक रुप में गलत संस्कारधारा चले वह...

उदा. निगोद आदि के जीव....

SESSION 3

अनंत सुखमय/गुणमय जीव के स्वरूप को ढंकते कर्मों और चलती दुःख/दोषों की परंपरा स्वरूप संसार...

१) अनंत सुखमय/गुणमय जीव :

- जीव का स्वरूप, सच्चिदानंद याने सत् चिद् + आनंद स्वरूप है।
- सत् = अस्तित्व, चिद्-ज्ञान-Emotion, आनंद निर्मल शाश्वत सुख...
- ऐसे पूर्ण चैतन्य स्वरूपवाला, सुख स्वरूपवाला जीव अनादि काल से मिथ्यात्व से युक्त है इसलिए कर्म से युक्त बनता हैं तथा पूर्ण स्वरूप से (सुख स्वरूप से) भ्रष्ट होकर भौतिक सुख के टुकडे के लिए पदार्थों के पास भीख माँगता हैं।
- इन कर्मों की गुलामी से मुक्त होना हो तो-

  (a) पूर्ण स्वरूप जिनको प्राप्त हुआ है ऐसे अरिहंत या सिद्धपरमात्मा के अनंत सुखमय गुणमय जीवात्मा का आलंबन लेना चाहिए तथा...

  (b) कर्मों के आवरण से ढके हुए अपने अनंत सुख/गुणमय जीवात्मा का आलंबन लेना चाहिए। इसलिए पूर्णात्मा के स्वरूप का ज्ञान जरुरी है।

जीव -

- अनंत ज्ञान/दर्शनमय = काँच जैसा जीव...

छोटे परंतु काँच के बोल में विराट होल का प्रतिबिंब एक साथ पडता है, उस तरह अनंतज्ञान/दर्शनमय आत्मा में ३ लोक-३ काल का ज्ञान एक साथ Reflect होता है।

- अनंत वीर्यमय (शक्तिमय)जीव = चंद्रकान्तमणि जैसा जीव

जिस तरह चंद्रकांत मणि हाज़िर हो तो वह दूर रही हुई अग्नि को भी बुझा सकता है... उसके प्रभाव मात्र से निश्चित मर्यादा में जलती आग बुझ जाती है, उसी तरह अनंत वीर्य नामक गुण साहजिक रुप से तमाम द्रव्यों पर उसका प्रभाव डाल सकता है, लोक को आलोक में, आकाश को पुद्गल में, पुद्गल को जीव में और जीव को पुद्गल बनाने की शक्ति उसमें है... अरे! कर्माधीन जीव को सिद्ध के जीव में Convert करना आदि... जैसा चाहे वैसा कार्य करने की शक्ति को पूर्ण जीव धारण करता है।

- पूर्ण वीतरागतामय जीव = स्फटिकरत्न जैसा जीव-

जिस तरह स्फटिक निर्मल है इसी वजह से मूल्यवान है-अमूल्य है, उसी तरह अनंत वीतरागता गुणयुक्त आत्मा स्वाभाविक निर्मल और अमूल्य है। आत्मा का स्वरूप ही पूर्ण-शुद्ध-उत्तम है... खुदके स्वरुप से जीव को निर्मल पवित्रता और प्रसन्नता की निरंतर अनुभूति होती है।

- अव्याबाध सुखमय जीव = शीतल जल जैसा जीव-

जल निर्मल है, स्वादु है, शीतल है... जल की यह quality स्वाभाविक है... उसी तरह आत्मा भी अनंत सुखमय है... यह सुख जीव का स्वभाव है... जीव निर्मल सुख की योनी है... पानी में स्वाद और शीतलता In-built है उस तरह शुद्धता में और शुद्धात्मा में अव्याबाध सुख In-built है।

- अरुपीपन-अक्षयस्थितिमय जीव = आकाश जैसा मुक्त जीव-

जैसे आकाश अरूपी है, अछेदी है, अभेदी है, अमूर्त है वैसे जीव भी अरूपी, अमूर्त होने के कारण सारे बंधनो से मुक्त बनता है। अनादिकालीन से अनंतकालीन तक है। कभी भी उसका नाश नहीं होता।

भिन्न भिन्न गुणों को ढंककर गुणमय, शुभमय, सुखमय जीव को दोषमय, मलीनतामय, दुःखमय बनानेवाले विविध कर्म...

२) प्रकृतिबंध-Nature of Karma :

- अनंतगुणमय/सुखमय आत्मा को मिथ्यात्व, अविरति, कषाय, योग खुद के मलिन अध्यवसायो से कर्मबंध होता है।
- कर्मबंध के समय कर्मप्रकृति (Nature of Karma) निश्चित होता है।
- आत्मा के ८ मुख्य गुणों को आवृत्त करने ८ प्रकार के स्वाभाववाले कर्म मलिन आत्मा ने शुभ आत्मा में Install किया।

गुण	कर्म	भेद	कार्य
अनंतज्ञान	ज्ञानावरण	५	३ लोक-३ काल की तमाम घटनाओं को एक साथ बतानेवाले ज्ञानगुण को ढंक देता है।
अनंतदर्शन	दर्शनावरण	९	३ लोक-३ काल की सारी घटनाओं को एकसाथ दिखानेवाले दर्शनगुण को ढकता है।
अनंतवीर्य	अंतराय	५	अनंत शक्ति-लब्धियों को ढकता है।
अनंतवीतरागता	मोहनीय	२६	सही-गलत का विवेक ढंकता है।
अरूपीपन	नाम	६७	अमूर्त/मुक्त आत्मा को शरीर की गुलामी में fit करता है।
अगुरुलघु	गोत्र	२	समान जीवों को असमान (उच्च-नीच) विभागो में बाटता है।
अक्षयस्थिति	आयुष्य	४	निश्चित काल एक भव में बाँध देता है।
अव्याबाध सुख	वेदनीय	२	भौतिक सुख-दुःख का अनुभव करवाता है।

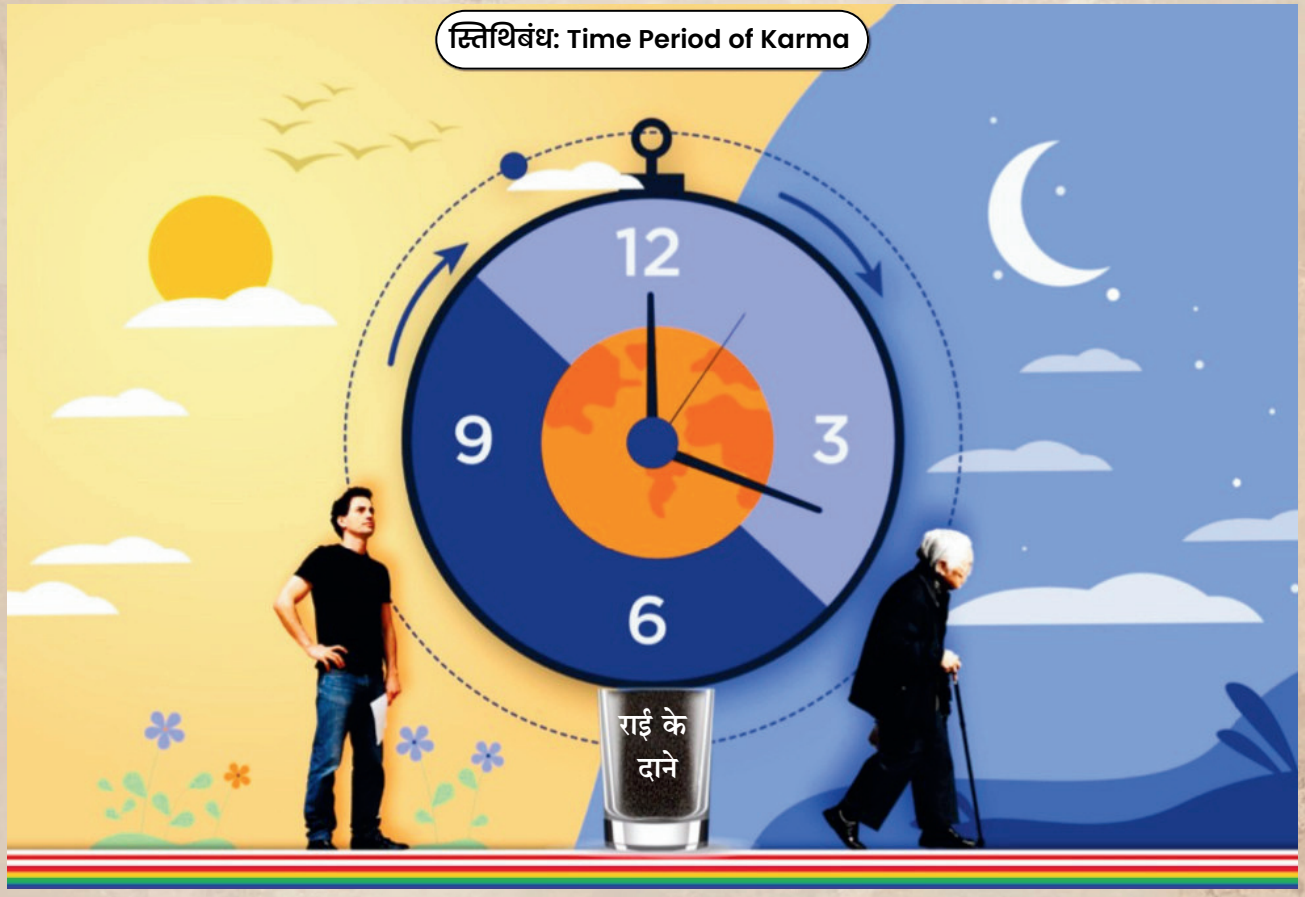

जैसे हर एक व्यक्ति या वस्तु की Expiry date होती है, वैसे हर एक कर्म की Expiry date को सूचित करती व्यवस्था याने कर्मों का स्थिति बंध ।

३) स्थितिबंध - Time Period of Karma:

- आत्मा से चिपका हुआ कर्म कितने समय तक जुड़ा रहेगा यह स्थिति बंध है। कर्म जब बंधता है तभी स्थितिबंध निश्चित होता है।

  उदा. सामायिक करने से ९२,५९,२५,९२५ पल्योपम काल का (स्थिति का) पुण्यकर्म बंध जाता है।

- पल्योपम-सागरोपम जानकारी १ योजन प्रायः १३ k.m. लंबा-चौड़ा गहरा खड्डा-सात दिन के युगलिक बालक के मस्तक के बाल के टुकडों से संपूर्ण भर देना। उसके उपर से चक्रवर्ती का सैन्य पसार हो फिर भी एक भी बाल ना दिखे ऐसे भरे हुए खड्डे में से १०० साल में एक बार एक टुकडा निकालते-निकालते जब खड्डा खाली हो जाए, यह एक पल्योपम। १० कोटाकोटी पल्योपम = १ सागरोपम।

	कर्म	कर्म का नाम	जघन्य स्थिति	उत्कृष्ट स्थिति
	१	ज्ञानावरण	अंतर्मुहूर्त	३० कोटाकोटी सागरोपम
	२	दर्शनावरण	अंतर्मुहूर्त	३० कोटाकोटी सागरोपम
	३	अंतराय	अंतर्मुहूर्त	३० कोटाकोटी सागरोपम
	४	मोहनीय	अंतर्मुहूर्त	७० कोटाकोटी सागरोपम
	५	नाम	८ मुहूर्त	२० कोटाकोटी सागरोपम
	६	गोत्र	८ मुहूर्त	२० कोटाकोटी सागरोपम
	७	वेदनीय	१२ मुहूर्त	३० कोटाकोटी सागरोपम
	८	आयुष्य	अंतर्मुहूर्त	३३ कोटाकोटी सागरोपम

- १ मुहूर्त = ४८ मिनिट, अंतर्मुहूर्त = २ समय से ४८ मिनिट में १ समय कम। मोहाधीन जीव कच्ची सेंकड में उपरोक्त कर्मबंध कर सकता है, इसलिए सावधान।

- कषाय बढ़ने के साथ साथ पुण्य या पापप्रकृति की स्थिति बढ़ती है, कषाय कम होने के साथ साथ पुण्य/पापप्रकृति की स्थिति कम होती है-कारण यह है कि कर्म की स्थिति संसार बढ़ाती है, इसलिए पुण्य-पाप दोनों प्रकृति की स्थिति संसार बढ़ानेवाली सोने की एवं लोहे की बेडी जैसी होने के कारण खराब ही कहलाती है। याद रहे नरक आयुष्य के अलावा ३ आयुष्य की स्थिति अच्छी मानी है। इसीलिए कषाय बढ़ेंगे तो यह तीन की स्थिति कम होगी, कषाय कम होगे तो यह तीन की स्थिति बढ़ेंगी।

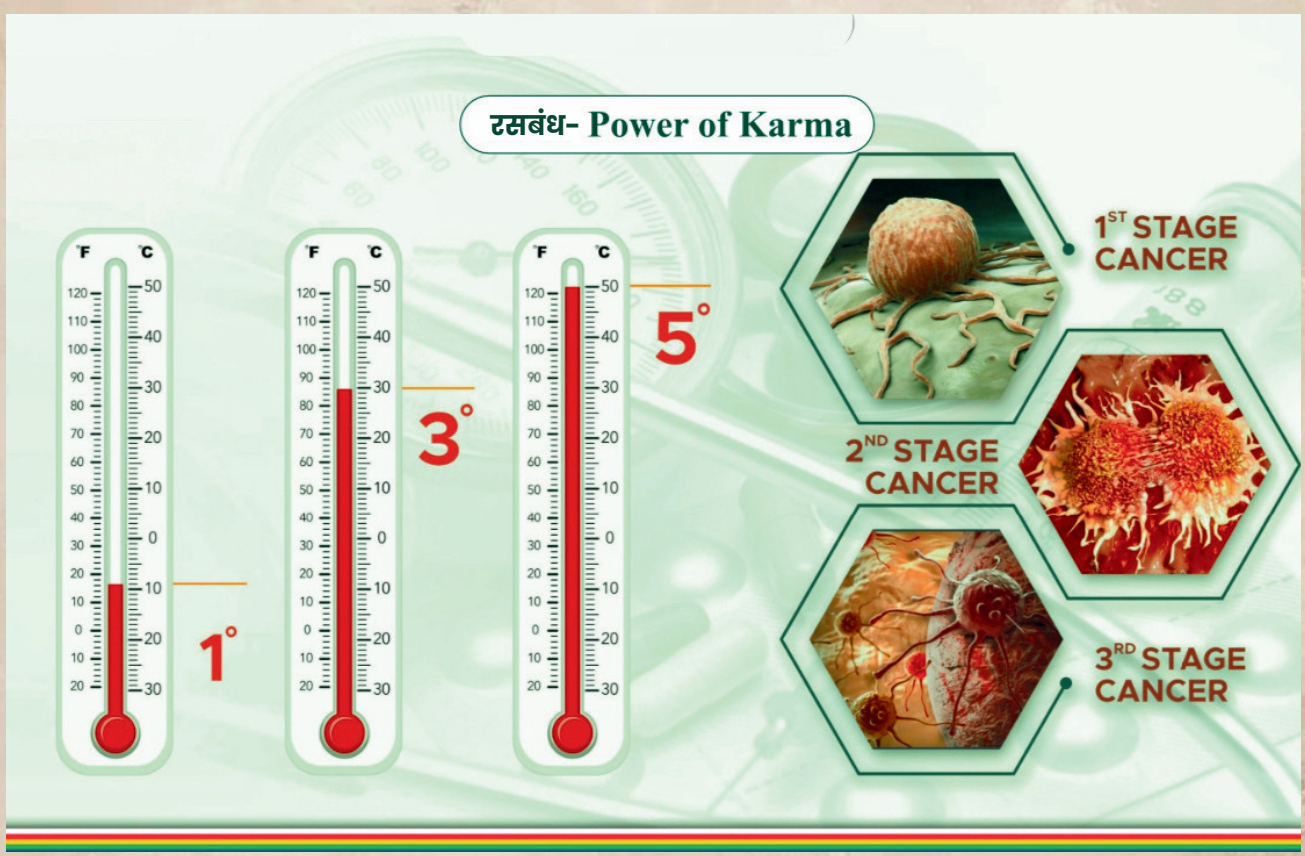

ये सारे कर्म आत्मा पर कौन-सी असर (प्रकृतिबंध), कितने समय के लिए (स्थितिबंध) तथा कितने power/force से, कितनी तीव्रता से देंगे यह रसबंध द्वारा निश्चित होता है।

४) रसबंध - Power of Karma

- लेश्याजन्य कषाय के परिणाम से रसबंध निश्चित होता है।
- बुखार आना याने अशातावेदनीय = प्रकृतिबंध ।
- बुखार ५ दिन चलना = स्थितिबंध, पर बुखार १-२-५ डीग्री आए यह रसबंध।
- कर्म कौनसा बंधेगा (प्रकृतिबंध), कितने समय का बंधेगा (स्थितिबंध), पर कर्म कैसा बंधेगा यह रसबंध,केन्सर की बीमारी यह अशाता वेदनीय (प्रकृतिबंध), पर केन्सर का कौन-सा stage यह रसबंध ।
- कषाय बढे पुण्य कर्म के रस का घटना/पापकर्म के रस का बढ़ना वृद्धि, कषाय कम हो पुण्य कर्म के रस का बढ़ना, पापकर्म के रस का कम होना।
- उदा. संगम। कषाय के कम होने से याने अहोभावपूर्वक खीर के दान से तीव्र रस के पुण्यकर्म का बंध किया, जिससे मानव के भव में देव का सुख मिला।

कार्मण पुद्गलों की नियत मात्रा जीव ग्रहण करता है,
ग्रहण की गई इस मात्रा को प्रदेशबंध कहते हैं।

५) प्रदेशबंध - Quantity of Karma

- कर्म कौन सा = प्रकृति बंध, कितना समय = स्थिति बंध, कैसा = रसबंध और कितना = प्रदेशबंध...
- कार्मण पुद्गलों की कितनी मात्रा कर्म में convert हुई वह प्रदेश बंध।
  प्रदेशबंध योग (मन/वचन/काया की शुभ अशुभ प्रवृत्ति) बढ़े तो बढ़े, कम हो तो कम.
- मन-वचन-काया की अल्प प्रवृत्ति = चम्मच तुल्य योग,
- मन-वचन-काया की मध्यम प्रवृत्ति = ग्लास तुल्य योग,
- मन-वचन-काय की अधिक प्रवृत्ति = बालटी तुल्य योग,
- मन-वचन-काय की अत्यधिक प्रवृत्ति = बाष्पीकरण तुल्य योग, इस तरह क्रमशः योग
  बढ़ता जाए तो प्रदेश बंध भी बढ़ता है।
- शक्कर का लड्डु कफ करता है, मेथी का लड्डु वायु हरता है, बूंदी का लड्डू पित्त हरता है = प्रकृति बंध।
- शक्कर का लड्डु ज्यादा समय तक टिकता है, मेथी का लड्डू मध्मय समय तक,
  बुंदी का लड्डु अल्प समय तक = स्थिति बंध।
  बुंदी की मिठास कम, शक्कर की ज्यादा = रसबंध।
- कोई लड्डु छोटा, मध्यम, मोटे कद का = प्रदेश बंध।

कुल साधिक ३० कोटाकोटि सागरोपम के समय अंतराल में ३० कोटा कोटि सागरोपम के कर्म की मोजूदगी

(A)

सेन्डवीच जैसा बंध

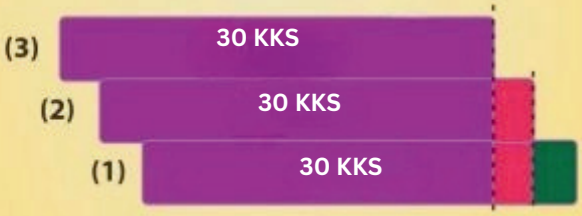

कुल ९० कोटाकोटि सागरोपम = ३० को.को.सा. के समय अंतराल में कर्म की मोजूदगी

(B)

जंजीर जैसा बंध

कर्म के बंध की Pattern जंजीरबंध = एक स्थिति के बाद दूसरी स्थिति नहीं परंतु सेन्डवीच बंध = एक स्थिति के ऊपर(मिलकर) दूसरी स्थिति रहनी है।

१) बंध का Pattern सेन्डवीच बंध या जंजीरबंध (काल्पनिक उदाहरण अनुसार)

- मिथ्यात्व + याने मिथ्यात्व, अविरति, कषाय, योग से युक्त जीव निरंतर कर्म बाँधता है।
- निरंतर बँधते कर्म आत्मा में Store हो जाते है जिसे सत्ता कहते हैं।

जंजीरबंध कर्म की उत्कृष्ट स्थिति ९० कोटाकोटि सागरोपम हो संतती है। एक ही पंक्ति में ३ बार ३० को.को.सा. की स्थिति का बंध होता है, ३० + ३० + ३० = ९० को. को.सा. की स्थिति में स्टोर होती है। इस तरह १ के बाद १ स्थिति जंजीर की तरह बन जाती है/स्वरूप लेती है। कर्म की स्थिति एक-दूसरे के ऊपर यानि एक दूसरे से जुडकर रहे यह सेन्डविच बंध ।

- उदा. ३० को.को.सा. + ३० को.को.सा. + ३० को.को.सा. + ३० को.को.सा. के समय में ९० को.को.सा. समय में भुगते जाने वाले कर्म मिलकर रहते हैं। इस तरह, सेन्डवीच बंध कर्म की उत्कृष्ट स्थिति ३० को.को.सा. है।
- मतबल रस की, प्रदेश की वृद्धि होती है, परंतु स्थिति से वृद्धि नहीं होती है। इस तरह, कुछ निश्चित समय में आत्मा में १, २, ३ संख्यात, असंख्यात कर्मबंध की स्थितियाँ इक्टठा होती हैं। ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय, वेदनीय की स्थितियाँ इक्टठा हो तो भी ३० को. को.सा. में समा जाती है।

नाम, गोत्र में उत्कृष्ट से २० को. को.सा., मोहनीय में ७० को.को.सा. की स्थिति आत्मा में रह सकती है।

भिन्न भिन्न समय में बँधे हुए कर्म इक्टठा होकर एक साथ उदय में आ सकते हैं। जिस तरह अलग अलग लेयर में वही सेन्डवीच एक साथ खा सकते हैं उस तरह।

२) उदय सेन्डविच :

- कर्मबंध में बंध-सेन्डविच की पेटर्न का अनुसरण करता है उसी तरह उदय में भी सेन्डवीच की प्रक्रिया से उदय में आता है।
- अलग अलग layer में रहा भोजनद्रव्य एक bite में खाया जा सकता है तो उसी प्रकार अलग अलग समय में बँधा अशातावेदनीय, अंतराय, उच्च गोत्र आदि कर्म का एक साथ भोग होता है।
- (काल्पनिक) उदाहरण स्वरूप :

  ता. १/६ को 'X' व्यक्ति ने पूजा की, शातावेदनीय ६ दिनो का बाँधा, जो २ पावर के रस का था, अब २/६ को 'X' व्यक्ति ने पूजा की, शातावेदनीय ७ दिनो का बाँधा, जो ३ पावर के रस का था, ३/६ को 'X' व्यक्ति ने पूजा की, शातावेदनीय ४ दिनो का बाँधा, जो ४ पावर के रस का था। हर कर्म बंधने के दूसरे ही दिन से उदय में आ जाता है।

• **Result:**

उदय तारीख	१/६	२/६	३/६	४/६	५/६	६/६	७/६	८/६	९/६
उदय में स्थितिग्रुप	-	a	a + b	a + b + c	a + b + c	a + b + c	a + b + c	b	b
उदय में रस	-	२ पावर	२+३ पावर	२+३+४ पावर	२+३+४ पावर	२+३+४ पावर	२+३+४ पावर	३ पावर	३ पावर
उदय में प्रदेश	-	२ पावर के प्रदेश	२+३ पावर के प्रदेश	२+३+४ पावर के प्रदेश	२+३+४ पावर के प्रदेश	२+३+४ पावर के प्रदेश	२+३+४ पावर के प्रदेश	३ पावर के प्रदेश	३ पावर के प्रदेश

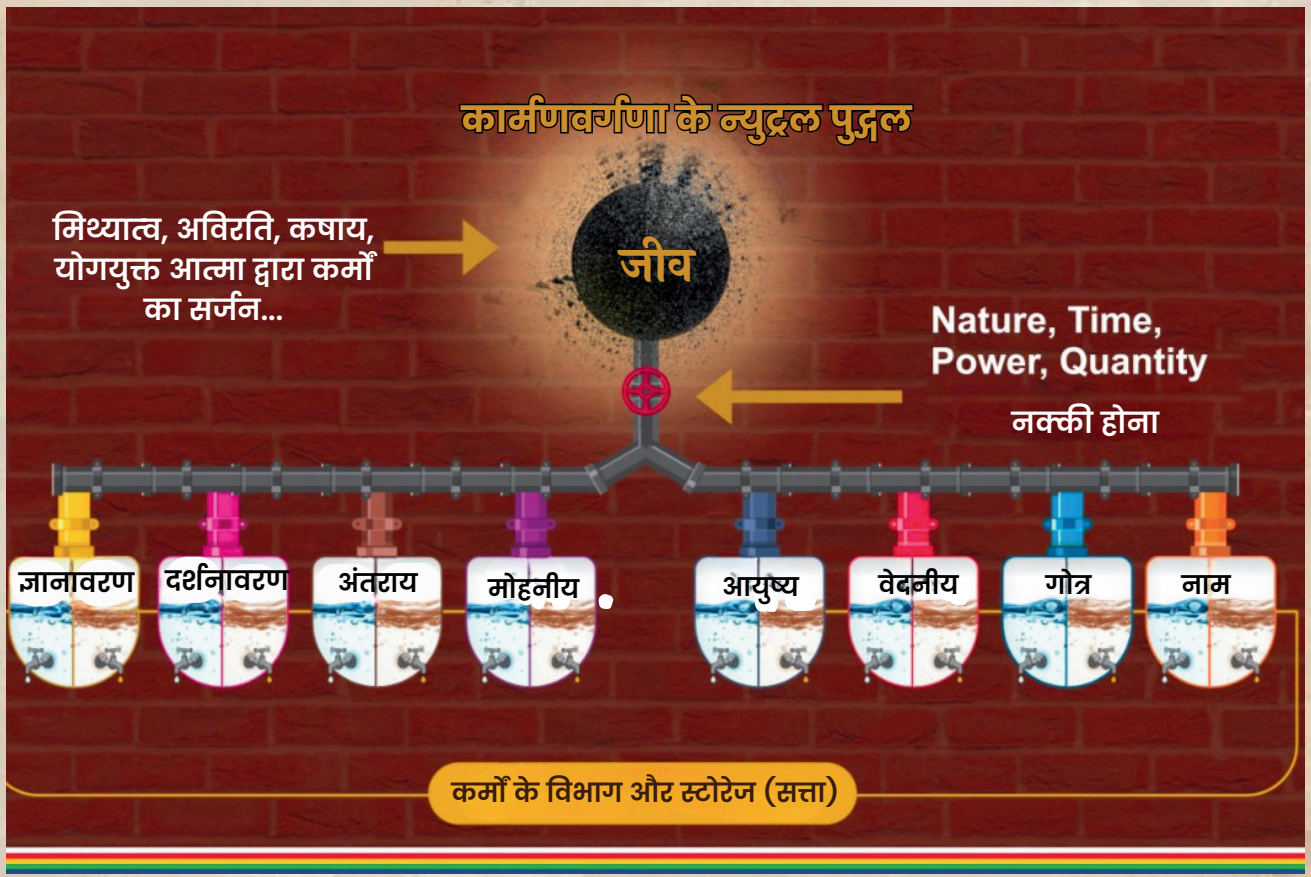

मिथ्यात्व यानि दलदल जैसे जीव को लगनेवाले कर्म, ८ मूल विभाग में तथा १२० उत्तर विभागो में विभाजित कर्म आत्मा में store हुए, जिसे सत्ता कहते हैं।

३) आत्मा में कर्मों का Storage = सत्ता

- प्रत्येक समय पर बंध होते हुए कर्म आत्मा में Store हो = सत्ता ।
- भिन्न-भिन्न समय पर जो कर्मों का बंध होता है, वे सारे मूल भेद से ८, उत्तर भेद से १२० (१५८) प्रकृति में विभाजित होते हैं और Store होते हैं।
- आयुष्य कर्म का बंध १ बार, ७ कर्म प्रत्येक समय बंधते हैं।
- प्रचलित मान्यता:
  हिंसा की = अशाता वेदनीय कर्म का बंध किया, ज्ञान जलाया = ज्ञानावरण कर्म का बंध हुआ।
- शास्त्रीय मान्यता:
  हिंसा की = आयुष्य का बंध हो तो ८, बाकी ७ कर्म बंधे उसमें मुख्य अशाता को बाँधा।
  ज्ञान जलाया = आयुष्य का बंध हो तो ८, बाकी ७ कर्म बंधे उसमें मुख्य ज्ञानावरण को बाँधा।
- जिस तरह सरोवर में पथ्थर गिरे-वलय चारों ओर फैलता है, उसी तरह अशुभ शुभ अध्यवसाय के वलय चारों ओर फैलते हैं, इसलिए सभी कर्मों का बंध होता है।
  उदा. पटाखे फोडने से ८ कर्मों का बंध होता है।

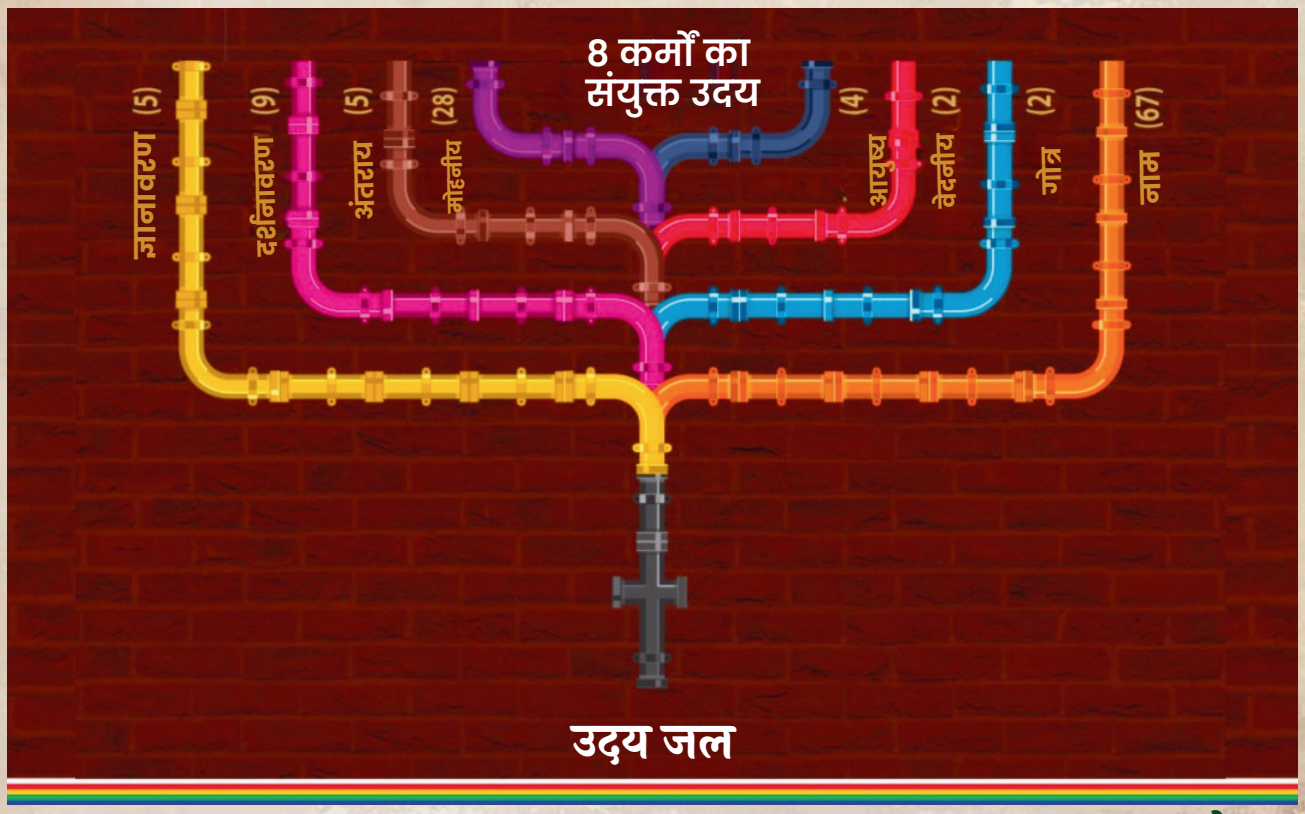

जिस तरह अलग अलग नल का पानी इक्ट्ठा होकर एक नल में से बाहर निकलता है, उसी तरह सत्ता में रहे भिन्न भिन्न कर्म इक्ट्ठा होकर एक साथ उदय में आते हैं।

४) उदय नल :

- जिस तरह भिन्न भिन्न नल का पानी इक्ट्ठा होकर अंत में एक नल से निकलता है। Incoming के १२० दरवाजे है, Outgoing का १ ही दरवाजा है।
- अलग अलग तार इक्ट्ठा होकर एक डोर या धागा बनता है, उसी तरह अलग अलग समय बँधे हुए अलग अलग कर्म उदय क्षण में इक्ट्ठा होकर एक साथ उदय में, अनुभव में आते हैं।
- उदा. वर्तमान क्षण में बालक को :

a. ११ x ११ = १२१, आता नहीं	= ज्ञानावरण कर्म
b. चश्मा होने से बराबर दिखता नहीं	= दर्शनावरण कर्म
c. ज्वर/बुखार से पीडित है	= अशाता वेदनीय कर्म
d. निरंतर चोकलेट खाने की इच्छा रूपी लोभ है	= मोहनीय कर्म
e. खानदान कुल में जन्मा है	= उच्च गोत्र कर्म
f. मनुष्य भव में सुंदर शरीर, आकर्षक व्यक्तित्व है	= नाम कर्म
g. वर्तमान में निश्चित आयु भोगने का कारण	= आयुष्य कर्म
h. ज्वर के कारण अशक्ति है	= अंतराय कर्म

- इस तरह, ८ कर्मों का (१२० उप कर्मों का) पानी उदय क्षण पर १ नल में से निकलता है यानि अनुभव होता है।

प्रत्येक कर्म के अलग अलग उपविभाग हैं। काल्पनिक तौर से Storage में (सत्ता में) रहा हुआ कर्मरूपी जल अलग अलग नल द्वारा कभी एक के बाद एक तो कभी एक साथ उदय में आता है।

५) उपविभागयुक्त कर्म :

- हरेक कर्म के उपविभाग हैं। जैसे कि ज्ञानावरण के ५, वेदनीय के २, दर्शनावरण के ९, आदि...
- इन उपविभागों की कर्म प्रकृति कभी साथे में (अपरावर्तमान) कभी क्रमशः (परावर्तमान) उदय में आती है।
- निश्चित गुणस्थानकों पर निश्चित प्रकृतिओं के बंध/उदय/सत्ता होती है।
- इससे जुडी कई विशेषताएँ कर्म विज्ञान Stage-२/३ में जानने मिलेगी।
  ऐसी पद्धति से बंधनेवाले ८ कर्म और उनकी १२० उत्तर प्रकृतियों की रोचक जानकारी Next Session में जानेंगे।

SESSION 5

घाति कर्म-अघाति कर्म

आत्मा के गुणों का मूल से नाश करे या संपूर्णतानष्ट करे वह सर्वघाति कर्म, आत्मा के गुणों को सामान्य से हानी पहुँचाए वह देशघाति कर्म, आत्मा के गुणों को हानी ना पहुँचाए परंतु आत्मा के पूर्ण स्वरूप अनंत सुख के अनुभव में बाधा डाले वह अघाति कर्म।

- कर्म के मुख्य २ विभाग हैं १) घाति कर्म २) अघाति कर्म
- घाति कर्म के भी २ विभाग हैं १) सर्वघाति कर्म २) देशघाति कर्म
- आत्मा के गुणों का घात करने का कार्य यह कर्म करता है।
- सर्वघाति कर्म मूल से गुणों का घात/नाश करता है।
  उदा. केवलज्ञानावरण, केवलदर्शनावरण, मिथ्यात्व मोहनीय, प्रथम १२ कषाय, ५ निद्रा कुल = २० ।
- खुद के द्वारा नाश करने योग्य गुणों को अल्प मात्रा में या फिर अंशात्मक दृष्टि से हानी पहुंचाए वो देशघाति ।
  उदा. ज्ञानावरण के शेष ४ भेद, दर्शनावरण शेष ३ भेद, अंतराय के ५ भेद, मोहनीय के शेष १३ भेद, ऐसे कुल-२५ ।
- आत्मा के गुणों का संपूर्ण अनुभव करने में बाधक तत्त्व अघाति कर्म। उसके ७५ उपविभाग हैं।
- घातिकर्म-४५ (पापप्रकृति)
- अघाति कर्म-७५ (पुण्यप्रकृति-पापप्रकृति दोनों का Total है)

३ लोक-३ काल के सभी पदार्थों को जानने (अनंतज्ञान), देखने (अनंतदर्शन) की लब्धिवाले शुद्ध जीव के ५ तथा ९ भेद को ढकता हुआ ज्ञानावरण तथा दर्शनावरण कर्म ।

- काल्पनिक दृष्टि से शीशे के बल्ले जैसी आत्मा है। जैसे शीशे के बल्ले में रूम की सभी सामग्री एक साथ प्रतिबिंबित होती है ऐसे जीव में ३ लोक, ३ काल या सर्वकाल का, सर्वद्रव्य का, सर्व पर्याय का ज्ञान एक साथ प्रतिबिंबत होता है। जीव के इस अनंतज्ञान, अनंतदर्शन गुण को ढके वो ज्ञानावरण कर्म - दर्शनावरण कर्म ।
- जीव को होते हुए विशेष बोध को ढकनेवाला ज्ञानावरण कर्म। उसके ५ उपविभाग है। १-सर्वघाति (SK), ४- देशघाति (DK) है। ज्ञानावरण कर्म आँखों पर पट्टी जैसा है। पट्टी बाँधने से आँख का सामर्थ्य होने के बावजूद भी वस्तु को हम जान नहीं पाते उसी तरह ज्ञानावरण कर्म से आत्मा का सामर्थ्य होने के बावजूद भी वस्तु का बोध नहीं होता है।
- दर्शन याने सामान्य बोध, उसको ढके वह दर्शनावरण कर्म-यह द्वारपाल जैसा है। उसके ९ उपविभाग हैं। ३- देशघाति (DK) हैं, ६-सर्वघाति (SK) हैं।
- जातिस्मरण (पूर्वभव की स्मृति) भी मतिज्ञान के धारणा नामक भेद का उपविभाग है।

केवलज्ञान को मूल से नाश करनेवाला केवलज्ञानावरण/दर्शनावरण कर्म तथा ढाई द्वीप (अढी द्वीप) के संज्ञिपंचेन्द्रिय के मन के विचारों को जानने की क्षमता को ढकता मनःपर्यवज्ञानावरण कर्म।

- शीशा तुल्य आत्मा में लोक-अलोक यानि सर्वक्षेत्र का, सर्वकाल का, सर्व भावों का प्रतिबिंब एक साथ दिखे याने केवलदर्शन-केवलज्ञान ।
- शीशे पर परदा गिरते ही प्रतिबिंब दिखता नहीं है। केवलदर्शनावरण-केवलज्ञानावरण कर्म का परदा जीव पर पडते ही जीव कुछ देख-जान नहीं सकता।
- पुद्गलों की ८ वर्गणाओं में से मनोवर्गणा के मन (विचार) स्वरूप में परिणमित पुद्गलों को ग्रहण जो करे वह मनःपर्यवज्ञान ।
  सिर्फ अढी द्वीप के संज्ञी पंचेन्द्रिय मनुष्य-तिर्यंच के मन के विचारों को जाने वह मनःपर्यवज्ञान।
- यह ज्ञान मात्र अप्रमत्त गुणस्थानक पर स्थित संयमी को ही उत्पन्न होता है।
  तीर्थंकर परमात्मा दीक्षा ले तब, "करेमि सामाइयं" का उच्चारण करते हैं तथा तभी उन्हें मनःपर्यवज्ञान उत्पन्न होता है।
- दूसरों के मन के भावों को जानने की उत्सुकता शांत होने के बाद मनःपर्यवज्ञान उत्पन्न होता है।
  यह ज्ञान के दो भेद हैं-१) ऋजुमति मनःपर्यवज्ञान, २) विपुलमति मनःपर्यवज्ञान... इन गुणों को ढकनेवाला मनःपर्यवज्ञानावरण कर्म...

नियत मर्यादा में रहे हुए रूपी पदार्थों को देखने-जानने वाला अवधि दर्शन/ज्ञान नामक आत्मा के गुण को हरनेवाला अवधि दर्शनावरण/ज्ञानावरण कर्म ।

- (अवधिज्ञान-अवधिदर्शन) ये दो गुणों का कार्यक्षेत्र व्यापक है और निर्मलता बढे तो गहरा भी है।
- अवधिदर्शन/ज्ञान - जनरल फीजीशियन जैसा, मनःपर्यवज्ञान - स्पेश्यालिस्ट डोक्टर जैसा।
- जघन्य से अवधिज्ञानी अंगुल के असंख्यात वे भाग क्षेत्र में रहे हुए भाषा एवं तैजस वर्गणा के पुद्गलों के अपांतराल में रहे हुए पुद्गलों के आवलिका के असंख्यात वे भाग तक के पर्यायों को जानता है।
- उत्कृष्ट से अवधिज्ञानी लोक-अलोक यानि अलोक में लोक प्रमाण असंख्य खंड हो तो उस में भी रहे हुए सर्व पुद्गलों के असंख्य उत्सर्पिणी-अवलर्पिणी के काल प्रमाण पर्यायों को जानता है।
- ये ज्ञान के मुख्य ६ भेद हैं १) अनुगामी अवधिज्ञान, २) अननुगामी अवधिज्ञान, ३) वर्धमान अवधिज्ञान, ४) हीयमान अवधिज्ञान, ५) प्रतिपाति अवधिज्ञान, ६) अप्रतिपाति अवधिज्ञान ।

जीव की पूर्ण जागृति को ढकनेवाली निद्रा के विविध भेद

- दर्शनावरण कर्म के उदय से विविध प्रकार की निद्रा का उदय होता है।
- क्रमशः इन सब की तीव्रता ज्यादा होती जाती है।
- निद्रा में इनसान ज्ञान से-विवेक से-जागृति से रहित बनता है, इसलिए गाढ कर्मबंध करता है।
- परमात्मा महावीर देव का १२.५ वर्ष के साधना काल दौरान सिर्फ ४८ मिनिट का प्रमाद काल यानि नींद का उदय था, जब कि तंदुलवैचारिक सूत्र कहता है कि सामान्य इनसान का जीवन ५०% प्रमाद में यानि नींद में जाता है।

निद्रा पंचक भाग-२

प्रचला प्रचला : चलते चलते सोता व्यक्ति

थिणद्धि :
सोता हुआ इनसान
नींद में भी पशु को
मार डालता है।

आत्मा को मूर्छित कर देनेवाली तीव्रकषाय के उदय से जीव की पत्नी तुल्य विविध निद्राएँ।

- अतितीव्र कषाय के उदय के लिए अतितीव्र नींद का उदय होना चाहिए।
- थिणद्धि निद्रा में अतितीव्र कषाय उदये में आते हैं और दिन का सोचा हुआ अयोग्य पाप रात को नींद में ही कर लिया जाता है।
- उदा. साधु-जंगल में हाथी-रात्रि में हाथी के साथ युद्ध-हाथीदांत उपाश्रय में-थिणद्धि के उदय से चारित्र से गुरु ने दूर किया।
- ऐसे साधुओं को दीक्षा नहीं दी जाती। दी हो तो संसार में वापस भेज देना पड़ता है।
  थिणद्धि निद्रा के उदयवाले पहले संघयणवालों का बल वासुदेव से आधा तथा छठे संघयणवाले का बल खुद के बल से दो, तीन, चार गुना भी होता है ऐसा बृहत्कल्प आगम में लिखा है।

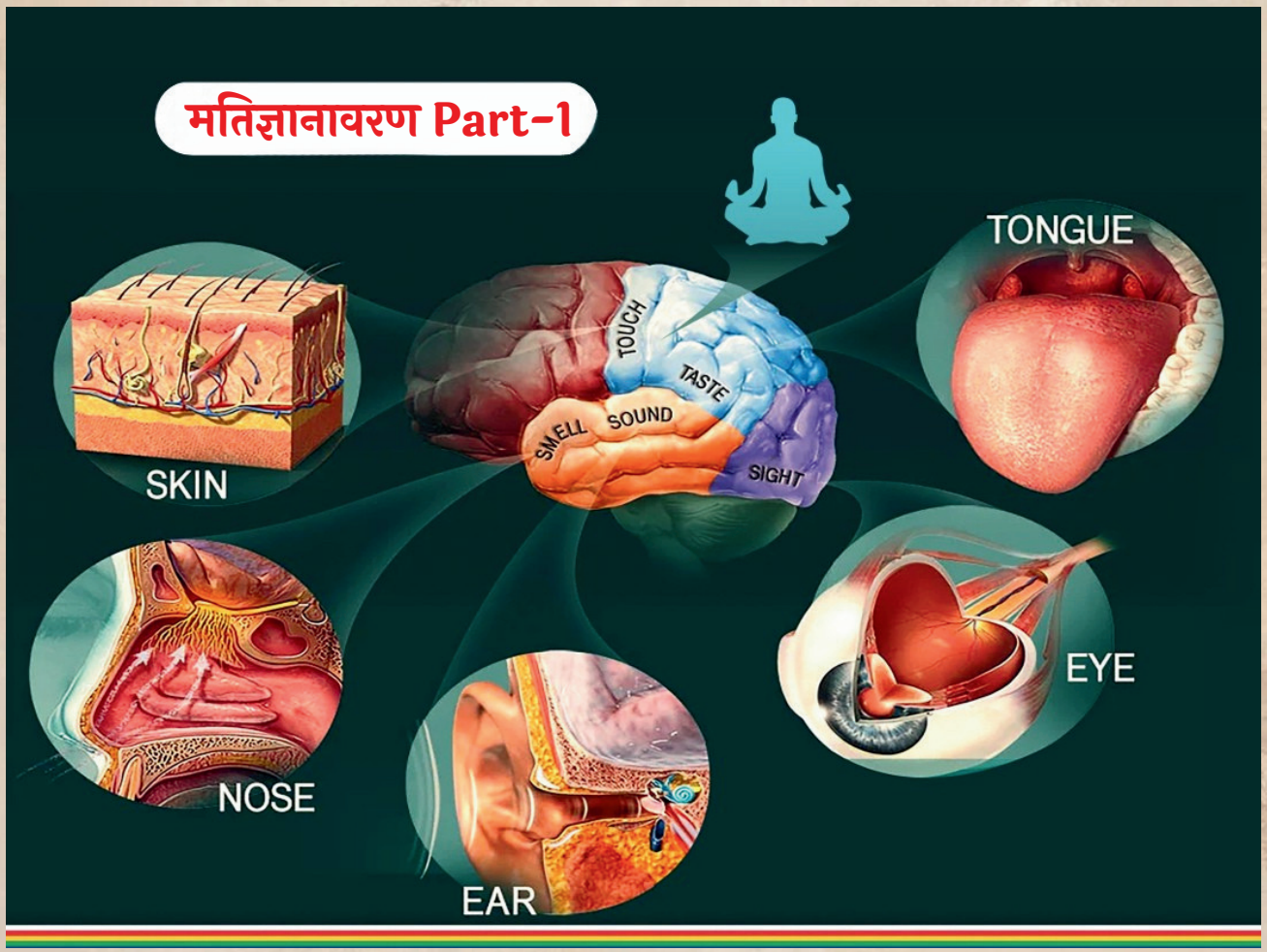

पाँच इन्द्रिय तथा मन द्वारा रूप-रस-गंध-स्पर्श-शब्द ग्रहण करके आत्मा को ज्ञान पहुँचाना वह हे मतिज्ञान। इसको ढँकनेवाला कर्म = मतिज्ञानावरण कर्म ।

- ५ इन्द्रिय तथा मन के पदार्थों के साथ जुडने से होता बोध मतिज्ञान ।
- मतिज्ञान के २ भेद हैं- १) श्रुतनिश्रित मतिज्ञान २) अश्रुतनिश्रित मतिज्ञान
- श्रुतनिश्रित मतिज्ञान : श्रुत परिकर्मित (भावित) बुद्धिवाले जीव को शास्त्र के अर्थ को सोचे बिना सहजता से उत्पन्न होता ज्ञान = श्रुतनिश्रित मतिज्ञान। इसके ३३६ भेद हैं।
- अवग्रह : १) व्यंजनावग्रह - इन्द्रिय तथा पदार्थ के संनिकर्ष यानि जुडने से होता अव्यक्तबोध...
  २) अर्थावग्रह - "यह कुछ तो है" ऐसा अव्यक्त बोध...
- ईहा : पदार्थ के सत्य बोध की नजदीक ले जाती curiosity यानि यह क्या होगा ? वैसी सोच...

- **अपायः** पदार्थ का निर्णयात्मक बोध...
- **धारणाः** निर्णयात्मक बोध की स्मृति स्वरूपी स्थिरता...
- इस तरह, प्राथमिक अव्यक्त बोध (अवग्रह), सत्य के सन्मुखात्मक बोध (ईहा), निर्णयात्मक बोध (अपाय), स्मृतिआत्मक बोध (धारणा) ये मतिज्ञान के उपविभाग हैं।
- चक्षु, मन x ४ (अर्थावग्रहादि ४) + शेष ४ इन्द्रिय x ५ (व्यंजनावग्रहादि ५) २८ भेद होते हैं।
- बहु-अबहु, बहुविध-अबहुविध, क्षिप्र-अक्षिप्र, संदिग्ध-असंग्धि, निश्रित-अनिश्रित, ध्रुव-अध्रुव इस तरह १२ भेदों के साथ २८ भेदों का गुणाकार करके ३३६ भेद होते हैं...
- इस तरह इन्हीं सारे भेद को ढकनेवाला श्रुतनिश्रित मतिज्ञानावरण कर्म भी ३३६ भेदवाला होता है।

श्रुतज्ञान

गुरु के मुख से शास्त्र का श्रवण करके उत्पन्न होने वाला ज्ञान श्रुतज्ञान कहलाता है, और इसे ढकने वाला कर्म श्रुतज्ञानावरण कर्म कहलाता है।

- शास्त्र के श्रवण से होने वाला बोध श्रुतज्ञान है।
- श्रोत्र और शब्द का संनिकर्ष होने के बावजूद, चूंकि यह शास्त्र का श्रवण है, इसे मतिज्ञान नहीं बल्कि श्रुतज्ञान कहा जाता है।
- गुरु के उपदेश, शास्त्र के श्रवण, पठन-पाठन, चिंतन आदि के माध्यम से जो मार्गानुसारी बोध होता है, उसे भाव-श्रुतज्ञान कहते हैं। इसमें निमित्त बनने वाले शब्द, लिखे हुए अक्षर आदि को द्रव्य-श्रुत कहा जाता है।

श्रुतज्ञान के 14 या 20 भेद बताए गए हैं। इसी प्रकार, श्रुतज्ञानावरण कर्म के भी 14 या 20 भेद होते हैं।

औत्पातिकी बुद्धि

वैनयिकी बुद्धि

अश्रुतनिश्रित मतिज्ञान

कार्मिकी बुद्धि

पारिणामिकी बुद्धि

अश्रुतनिश्रित मतिज्ञान के 4 भेद अर्थात् 4 प्रकार की बुद्धियाँ मति ज्ञान में सम्मिलित होती हैं, जो दैनिक जीवन में उपयोगी हैं।

- **अश्रुतनिश्रित मतिज्ञान:** यह ऐसा ज्ञान है जो शास्त्रों के बोध या आधार के बिना उत्पन्न होता है।

  इसमें 4 प्रकार की बुद्धि का समावेश होता है:

  औत्पातिकी: कार्य के अवसर पर या अज्ञात संयोग के संपर्क से स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होने वाला बोध।

  वैनयिकी: गुरु का विनय (आदर) करने से उत्पन्न होने वाला विशेष बोध।

  कार्मिकी: "Practice Makes Man Perfect" इस उक्ति के अनुसार कार्य करते-करते उत्पन्न होने वाला विशेष बोध।

  पारिणामिकी: उम्र की परिपक्वता (maturity) से उत्पन्न होने वाला बोध।

  इस प्रकार, 336 + 4 (बुद्धियाँ) = 340 प्रकार के मति ज्ञान को ढकने वाला मति ज्ञानावरण 340 भेदों वाला होता है।

मतिज्ञानावरण Part-2

Grasping, Logic, Decision, Memory आदि मतिज्ञान स्वरूप हैं।

- Grasping : देखकर, पढकर, सुनकर पहली बार में सीखने की भूमिका।
- Logic : खुद के इष्ट बोध को तार्किक दृष्टि से प्रस्तुत करने की शक्ति।
- Decision : अनिर्णयात्मकता छोडकर ठोस निर्णय करने की शक्ति।
- Memory: किसी भी प्रकार के ज्ञान को, बोध को स्मृति में याद करने की शक्ति या स्मृति में संभालके रखने की शक्ति।
- अगर यह सभी, श्रुत की भावितापूर्वक हों तो श्रुतनिश्रित मतिज्ञान में समाता है।
  श्रुत के अनुसंधान रहित हो तो अश्रुतमिश्रित मतिज्ञान में समाता है।
  पर अगर श्रुत के आधार पर या अनुसंधान से हो तो श्रुतज्ञान में समाते है।

मतिज्ञानावरण Part-3

संसार में हर पल उपयोगी बनती हुई भिन्न भिन्न कलाएँ और शक्तियाँ ...

मति-श्रुतज्ञानावरण के क्षयोपशम से मिलती शक्तियाँ:

- चित्र में दिखती तथा इनके अतिरिक्त अनेक कलाएँ मति- श्रुतज्ञानावरण के क्षयोपशम से प्राप्त होती हैं।

- शास्त्र में पुरुष की ७२, स्त्री की ६४ कलाओं का वर्णन है, ये सारी भी मति एवं श्रुतज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से प्राप्त होती हैं।

ज्ञानावरण-दर्शनावरण कर्म का उदय

मति-श्रुत ज्ञानावरण तथा चक्षु-अचक्षु दर्शनावरण कर्मों के उदय के विविध पहलु, अगर इनसे बचना हो तो ऐसे कर्म हम बाँधे ही नहीं इसलिए जागृत रहना चाहिए।

ज्ञानावरण-दर्शनावरण कर्म के विपाक :

- जीवन जीने के लिए आवश्यक शक्तियाँ, जैसे कि देखना, चलना, बोलना, सोचना, सुनना आदि के लिए योग्य बाह्य उपकरणों की प्राप्ति ना होना या तो उनका कमजोर होना, उपर्युक्त सब के लिए अभ्यंतर शक्तियों का ना मिलना या कम मिलना...
- कोई निश्चित द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव को केन्द्र में रखकर या फिर स्वतंत्र रूप से ये कर्म उदय में आकर जीव को परेशान करते हैं तथा जीत की बाजी को हार में परिवर्तित करते हैं। इसलिए सावधान !

  उदा. परीक्षा में ही भूल जाना, इन्टरव्यू में बुरा परफोर्मन्स, फाइनल युद्ध में ही कर्ण का विद्या भूल जाना आदि...

ज्ञानावरण-दर्शनावरण कर्म बांधने के कारण

ऐसे अनेक कारणों से ज्ञानावरण-दर्शनावरण कर्म का बंध होता है और जीव दुःखी हो जाता है।

कर्म बंध के विविध कारण :

- ज्ञान, ज्ञानी, ज्ञान के साधन एवं दर्शन-दर्शनी, दर्शन के साधन के प्रति उपेक्षा, अप्रीति, आशातना....
- विद्यागुरु यानि ज्ञानदाता गुरु का अनादर, उनकी मस्ती करना, उदंडताभरा वर्तन करना।
- ज्ञानप्राप्ति में आलस (पुरुषार्थ का अभाव)
- पापत्याग की अविरति (प्रतिज्ञा का अभाव)...
- इन्द्रियों का यानि कान-जीभ आँख का तथा मन का दुरुपयोग...
- पुस्तक-पस्ती बेचना, बेचने से प्राप्त रकम का संसार के कार्यों में उपयोग करना।

ज्ञानावरण-दर्शनावरण कर्म नष्ट करने के कारण

विनय आदि उपायों के द्वारा ज्ञानावरण/दर्शनावरण कर्म नष्ट होते हैं।

कर्मनिर्जरा के उपाय:

- ज्ञान-ज्ञानी का बहुमान, विनय करना, उनकी मदद भक्ति करना।
- सरस्वती देवी की उपासना, ज्ञान की उपासना करना ।
- नया ज्ञान अर्जित करना तथा पुराने ज्ञान को पुनरावर्तन करने का पुरुषार्थ करना।
- पुस्तक, आगम-ग्रंथ पढ़ना-पढ़ाना, पढ़नेवालों के लिए स्कूल की ड्रेस, पुस्तक आदि की व्यवस्था करनी।
- नूतन ग्रंथो का लेखन करना-करवाना, ग्रंथो की ग्रंथभंडारो की देखभाल करना।
- ज्ञान की आराधना, जैसे खमासमण, नवकारवाली, काउस्सग्ग आदि नियमित करना।
- ज्ञानावरण-दर्शनावरण कर्म बाँधने की प्रवृत्तियों पर संपूर्ण रोक।

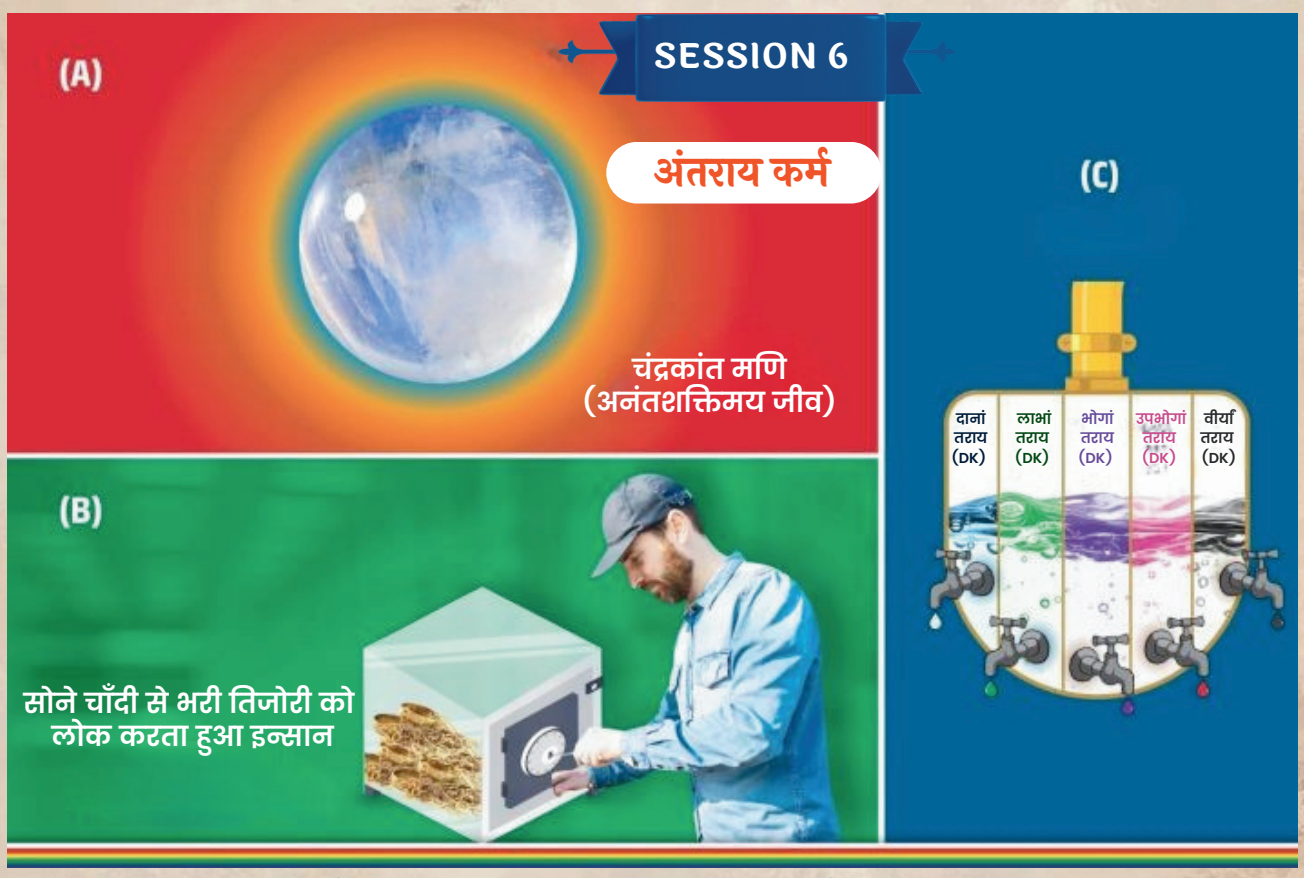

चंद्रकान्त मणि की तरह अनंतशक्ति के धारक जीव की शक्ति एवं लब्धि को ढंक देनेवाले पाँच प्रकार के अंतराय कर्म

अंतराय कर्म :

- जीव अनंतशक्ति का स्वामी है, जिस तरह नियत अंतर में रही आग को चंद्रकांत मणि दूर रहकर भी खुद के अस्तित्व मात्र से बुझा देता है, उस तरह लोक को अलोक में, अलोक को लोक में, अजीव को जीव में Convert करने की ताकात आत्मा में है, आत्मा में जो अनंतवीर्य (शक्ति) है, उसको ढंकने का काम करे अंतराय कर्म।
- जिस तरह तिजोरी में बहुत माल होने के बावजूद लोक कर दी जाती है और उस माल का उपयोग नहीं हो सकता, उसी तरह आत्मा में अनंत शक्ति होने के बावजूद भी यह कर्म उसको ढक देता है, लॉक कर देता है, इसलिए जीव खुद की शक्ति का उपयोग नहीं कर सकता।

इस कर्म का ५ उपविभाग हैं-यह सारे (५) कर्म देशघाती हैं।

अनंत लब्धियुक्त जीव को दान करना है, लेकिन याचक नहीं मिलता, क्योंकि दानांतराय कर्म बाधा डालता है। और जो चीज़ अंत तक पहुंच चुकी हो, वह भी छीन ली जाती है और लाभ होते-होते रह जाता है, क्योंकि लाभांतराय कर्म बाधा डालता है।

दानांतराय/लाभांतराय कर्म :

- इस कर्म के उदय से दान देने वाले को कोई याचक नहीं मिलता। लेने वाले को आवश्यकता न होने के कारण, देने की भावना पूरी नहीं हो पाती। इसका कारण यही कर्म है।
- इस कर्म के उदय से लेने वाले को आवश्यकता होती है, लेकिन देने वाला व्यक्ति मौजूद नहीं होता। यदि व्यक्ति मौजूद हो और देने की इच्छा भी हो, तो वस्तु Available नहीं होती। इस कारण लाभ प्राप्त नहीं हो पाता। नौकरी चाहिए, सामग्री चाहिए, लेकिन वह नहीं मिलती, क्योंकि लाभांतराय कर्म का उदय होता है।

सामग्री हाथ में होने के बावजूद भी उसका भोग न कर सको इसका कारण भोगांतराय - उपभोगांतराय कर्म ।

भोगांतराय/उपभोगांतराय कर्म :

- सामग्री न मिलना = लाभांतराय, मिलने के बाद उसका भोग न कर पाना भोगांतराय - उपभोगांतराय कर्म ।
- Single Time Use वाली सामग्री -भोग सामग्री कहलाती है ।
  Long Time Use वाली सामग्री - उपभोग सामग्री कहलाती है ।
- मिष्ट भोजन की रुचि है, भोजन हाजिर है, फिर भी मधुमेह (डायाबिटीज) रोग हो और इसी वजह से भोजन नहीं किया जा सकता, यह है भोगांतराय कर्म ।
- नए मोडल की, गाडी-मोबाईल आदि सामग्री है, वापरने की इच्छा आवश्यकता भी है पर अचानक ऋणदाता सामने दिखाई दे और सामग्री का उपभोग ना हो सके यह है उपभोगांतराय कर्म ।

अनंत शक्ति का स्वामी जीव... वीर्यांतराय कर्म की पराधीनता के कारण शक्तिहीन बना हुआ है।

वीर्यांतराय कर्म :

- यह कर्म शरीर की शक्ति और मन की ताकत को रोकने वाला है।
- इस कर्म के उदय से शरीर की शक्ति और मन की शक्ति ढक जाती है।
- अलग-अलग आयु, शरीर में रोग आदि के कारण इस कर्म का उदय लगातार बदलता रहता है।
- दानलब्धि, लाभलब्धि, भोग/उपभोगलब्धि और वीर्यलब्धि को धारण करने वाले जीव को इस कर्म का लगातार बंध और उदय होता रहता है।

दूसरों को भोजन-पानी या सामग्री में विघ्न करना, संतानों से दूर करना आदि से अंतराय कर्म का बंध होता है।

कर्मबंध के कारण :

- जिनपूजा में, जिनवाणी श्रवण में या अन्य कोई धर्म में किसी को विघ्न करना या बाधा डालना ।
- पाँच महाव्रतों का भंग करना, साधुओं को वसति-पात्र-गोचरी आदि में बाधा डालना।
- संतानों को अपने माता-पिता से दूर करना।
- दूसरों को दान-लाभ-भोग-उपभोग में अंतराय करना आदि से अंतराय कर्म का बंध होता हैं ।

दान, त्याग, सेवा, वैयावच्च आदि के माध्यम से अंतराय कर्म टूटता है।

अंतराय कर्म को तोड़ने के उपाय :

- दूसरों के कार्यों में बाधा न डालते हुए, उनकी मदद करना।
- टूटे हुए संबंधों को जोड़ना और एक-दूसरे के मन से पूर्वाग्रहों को समाप्त करना।
- अपनी क्षमता के अनुसार दान देना, पुरुषार्थ करना, तप करना, मदद करना और सेवा करना।
- आत्मा को दूषित करने वाली वस्तुओं का पूरी तरह त्याग करना।
- जो वस्तु किसी और को पसंद है, उसका स्वयं त्याग करके उसे दूसरों को दे देना।

स्फटिक रत्न जैसे निर्मल जीव को अशुभ का आकर्षण/अशुभ के आचारण की ओर प्रेरित करता मोहनीय कर्म।

मोहनीय कर्म :

- जिस तरह स्फटिक निर्मल होता है, उसी तरह आत्मा स्वयं शुद्ध होता है। जिस तरह बाहर की मलिनता से स्फटिक की निर्मलता आच्छादित हो जाती है, उसी तरह कर्मों से आत्मा की निर्मलता भी ढंक जाती है।
- आत्मा स्वयं अनंत गुणमय, अनंत सुखमय, अनंत शक्तिमय, वीतराग स्वरूपी है, परंतु मोहनीय कर्म आत्मा के गुणों को ढंक देने में प्रबल कारण बनता है।
- कर्मबंध के कारण मिथ्यात्व, अविरति, कषाय ये तीन स्वरूप ही मोहनीय कर्म है, याने मोहनीय कर्म से ही मोहनीय सहित आदि ७ कर्मों का बंध होता है। मोहनीय कर्म नहीं है तो बाकी के ७ कर्म भी नहीं है, मोहनीय कर्म जीवंत है तो बाकी के ७ कर्म भी जीवंत है।
- मदिरापान करता हुआ सज्जन जिस प्रकार अच्छा-बुरा, सही-गलत के विवेक से भ्रष्ट होकर गलत प्रवृत्तियों को सही मानकर करने लगता है, उसी तरह मोहनीय कर्म से वश जीव Clarity of Vision और Purity of Action को खतम कर दुःखी बनता है।
- मोहनीय कर्म के मुख्य तीन भेद हैं दर्शन मोहनीय, चारित्र मोहनीय यानि कषाय-नो कषाय मोहनीय। दर्शन मोहनीय सर्वघाति (SK) होता है। चारित्र मोहनीय (SK, DK) उभयमय होता है।

आत्मकल्याणकर सुदेव-सुगुरु-सुधर्म एवं सच्चे सुख में कुदेवादि की बुद्धि करवाने वाला दर्शन मोहनीय कर्म।

दर्शन-मोहनीय का स्वरूप :

- Clarity of Vision को disturb करनेवाले इस कर्म के प्रभाव से सच में झूठ की, झूठ में सच की, सुख में दुःख की, दुःख में सुख की, अच्छे में बुरे की, बुरे में अच्छे की बुद्धि होती है। यह मिथ्यात्व-मिथ्यादर्शन आदि नाम से जाना जाता है।
- सुदेव-सुगुरु-सुधर्म में कुदेव-कुगुरु-कुधर्म की बुद्धि हो = मिथ्यात्व।
  जब सुदेव सुगुरु-सुधर्म में वैसी ही बुद्धि हो = सम्यक्त्व ।
- सम्यक्त्व से भवों की गिनती का आरंभ होता है, आत्मा का मोक्ष निश्चित होता है। अर्धपुद्गलपरावर्त की अवधि मात्र में संसार सीमित हो जाता है।
- मिथ्यात्व हो तो संसार है, दुःख की परंपरा है....
  समकित है तो सिद्धि है, सुख की परंपरा है।

अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानीय, प्रत्याख्यानीय, संज्वलन प्रकार के क्रोध, मान, माया, लोभ से संसार की कातिल वेदना भुगतने वाले जीव

कषाय मोहनीय कर्म का स्वरूप :

- कषायों के मुख्य विभाग क्रोध, मान, माया, लोभ

  इन सबके उपविभाग १) अनंतानुबंधी, २) अप्रत्याख्यानीय, ३) प्रत्याख्यानीय, ४) संज्वलन

  कषाय कौन-से गुणों का घात करता है, कौन-सी गति में ले जाता है, कितने समय टिकता है तथा किसके जैसाहोता है, यह दिखाता कोष्टकः

क्रम	कषाय	गुणघात	गतिप्राप्ति	उत्कृष्ट स्थिति	क्रोध किसके जैसा	मान किसके जैसा	माया किसके जैसी	लोभ किसके जैसा
१	अनंतानुबंधी	सम्यक्त्व	नारक	यावज्जीव	पर्वत के विभाग	पत्थर का स्तंभ	बाँस की जड़ें	किर्मज का रंग
२	अप्रत्याख्यानीय	देशविरति	तिर्यंच	१ वर्ष	पृथ्वी की फाड	हड्डियों का स्तंभ	भेडे के सींग	रथ की मळी
३	प्रत्याख्यानीय	सर्वविरति	मनुष्य	४ मास	रेत में रेखा	काष्ट का स्तंभ	गोमूत्र	काजल
४	संज्वलन	यथाख्यात चारित्र	देव	१ पक्ष	पाणी में रेखा	नेतर की कालिख	बांस की खाल	हल्दी का रंग

कषायों के सहायक हास्य आदि नोकषाय से युक्त कषायों से पीडित संसारी जीव

नोकषाय मोहनीय का स्वरूप :

- कषायों का सहायक, उत्तेजक नोकषाय। इसके ९ भेद हैं।
- जीव की सायकोलोजी को यह कर्म प्रकट करता है।
- मन के सारे मलिन विचारों कषाय नोकषाय के उदय स्वरूप है।
- हास्य, रति, अरति, भय, शोक, दुगंच्छा, पुरुषवेद, स्त्रीवेद, नपुंसक वेद आदि ९ प्रकार के नोकषाय हैं।
- रति याने राग की तीव्रता, अरति याने द्वेष की तीव्रता ।
- पुरुषवेद में स्त्री को, स्त्रीवेद में पुरुष को, नपुसंक वेद में उभय (दोनों को) भुगतने की इच्छा होती है।

ऐसे अनेक कारणों से मोहनीय कर्म का बंध होता है, मोहनीय कर्म याने मिथ्यात्व तथा कषायों का समन्वय, इसलिए यह कर्म भी है और ८ कर्मों के बंध का कारण भी है।

मोहनीय कर्म बंध के कारण :

- संसार के कारणों को मोक्ष के कारणों की तरह दिखाना, उन्मार्ग देशना या उत्सूत्र प्ररूपणा करना...
- देव-गुरु-ज्ञान-साधारण द्रव्य की उपेक्षा करना, चोरी करना, हानी पहुँचाना...
- जिन, जिन प्रतिमा, मुनि, जिनालय, संघ, ज्ञान आदि का अवर्णवाद करना-आशातना करनी आदि...
- मस्ती करना, निंदा करना, ईर्ष्या, प्रमाद, विषयसुखों का सेवन, दूसरों को डराना, तीव्र कषायों का सेवन...

उपरोक्त अनेकविध आराधनाओं से मोहनीय कर्म तूटता है और जीव की ऊर्ध्वगति होती है।

मोहनीय कर्म की निर्जरा के उपाय :

- निरंतर शुभ ध्यान शुभ, विचार करना।
- सारे पापों का गुरु साक्षी में आलोचन करना...
- तीर्थ की-शासन की धर्म की सुरक्षा, समृद्धि, संवर्धन के लिए तन/मन/धन का अर्पण...
- देशविरति, सर्वविरति धर्म की यथाशक्य आराधना करना...
- पाँच महाव्रतों का पालन करना, विशेषत: ब्रह्मचर्य का पालन...
- परमात्मा भक्ति, गुरु वैयावच्च करना...

SESSION 7

आयुष्य कर्म

शाश्वत अस्तित्व की धारक आत्मा को भिन्न भिन्न भवो में जकड़कर रखनेवाला आयुष्य कर्म...

आयुष्य कर्म का स्वरूपः

- अनादि अनंत तक की अवधि यानि शाश्वतकालीन अवधि के धारक जीव को नियत समय तक उस-उस भव में यानि देह में बाँधने का काम आयुष्य कर्म करता है।
- इसके चार प्रकार हैंः १) देव आयुष्य, २) मनुष्य आयुष्य, ३) तिर्यंच आयुष्य, ४) नरक आयुष्य इन में देव, मनुष्य और तिर्यंच आयुष्य पुण्योदय स्वरूप हैं, नरक आयुष्य पापोदय स्वरूप है।
- सभी को अपना जीवन-आयुष्य पसंद होता है, इसलिए आयुष्य को पुण्यप्रकृति ही गिननी चाहिए, परंतु नारकी के जीवों को निरंतर कष्ट-वेदना-दुःख के कारण अपना जीवन आयुष्य बिलकुल पसंद नहीं होता। निरंतर मरने की इच्छा होती है, इसलिए नरक आयुष्य पाप-प्रकृति मानी जाती है।
- दूसरे कर्मों का निरंतर बंध होता है, आयुष्य कर्म मात्र १ भव में एक बार ही बंधता है। वह भी प्रायः २/३ भाग छोडकर १/३ भाग में उसका बंध होता है। सुद-वद पक्ष की २, ५, ८, ११, १४, पूनम एवं अमावस्या के दिन आयुष्य बंध की संभावना ज्यादा है, इसलिए परंपरा से पर्वतिथि तथा पर्वतिथि की अखंड आराधना करके आत्मकल्याण करना चाहिए।

उपरोक्त कारणों से देव आयुष्य का बंध होता है।

देव आयुष्य बंध के कारण :

- सम्यक्त्व, देशविरति, सर्वविरति से...
- अकामनिर्जरा, अज्ञान तप-त्याग-कष्ट सहन करना...
- धर्मश्रवण, धर्मपालन, शुभ भावपूर्वक तप करने से...
- अच्छे मित्रों की संगति से, सुपात्र दान से...
- मन की (विचारों की) पवित्रता से...

उपरोक्त कारणों से मनुष्य आयुष्य का बंध होता है।

मनुष्य आयुष्य बंध के कारण :

- दान, सहाय, परोपकार आदि से...
- कषायों की अल्पता, परिग्रह की अल्पता, पापों की अल्पता...
- प्रभु पूजा, गुरुवंदन, साधर्मिक भक्ति आदि से...
- अच्छे से समजाया जा सके ऐसी सरलता से....

उपरोक्त कारणों से तिर्यंच आयुष्य का बंध होता है।

तिर्यंच आयुष्य बंध के कारण :

- माया, जिह्वीपन, गूढ हृदय आदि से...
- शीलव्रत में लगे अतिचारों का गुरुसाक्षी में प्रायश्चित ना किया हो तो...
- मध्यम कक्षा के कषायों तथा मध्यम लेश्या मतलब अप्रत्याख्यानीय कषाय युक्त विचारधारा से...
- मध्यम कक्षा के आरंभ-समारंभ, उत्सूत्र प्ररूपणा से...

उपरोक्त कारणों से नरक आयुष्य का बंध होता है।

नरक आयुष्य बंध के कारण :

- महा पापवाली, अतिहिंसक प्रवृत्तियों से...
- पंचेन्द्रिय की हिंसा, मांसाहार, अतितीव्र पाप प्रवृत्ति और विचारधारा से...
- इन्द्रियों की परवशता, दृढ वैर, पांच महाव्रतों के भंग से....
- तीव्र झूठ, हिंसा, चोरी आदि से....
- देवद्रव्य का भक्षण-दुरुपयोग करने से...

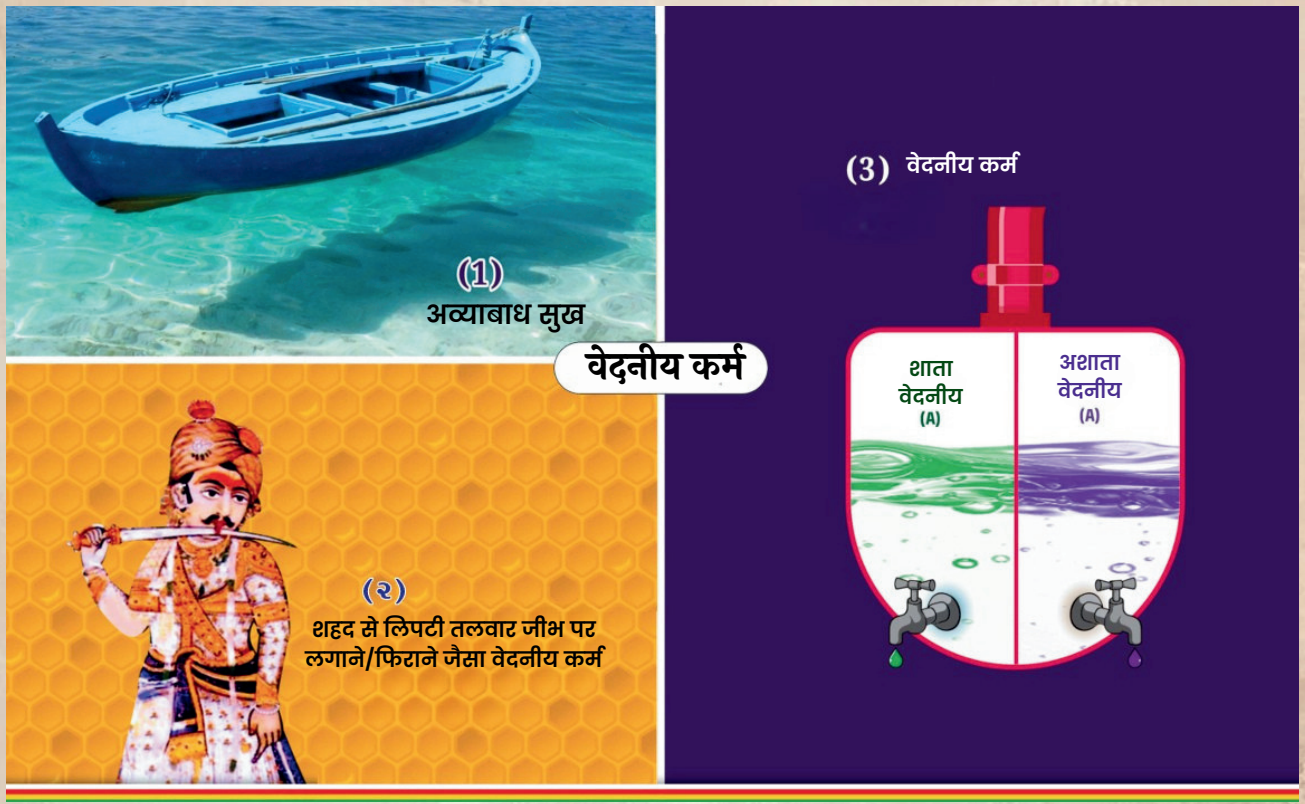

जीव को भौतिक सुख-दुःख का अनुभव करवाकर आत्मिक,आध्यात्मिक, वास्तविक सुख से दूर रखनेवाला वेदनीय कर्म।

वेदनीय कर्म का स्वरूप:

- जिस तरह जल, निर्मल होने के साथ साथ स्वभाव से शीतल होता है, उसी तरह आत्मा (जीव) भी स्वाभाविक रूप से निर्मलता के साथ अनंत सुखमय है। शुद्ध जीव यानि मोहनीय कर्म से रहित जीव-सुख की योनि स्वरूप है।
- आत्मिक सुख और आभासिक सुख-दोनों के बीच बड़ा अंतर है। वेदनीय कर्म शरीर को (पुद्गल को) सुख-दुःख की अनुभूति करवाता है तथा परंपरा में जीव को दुःखी करता है। वेदनीय कर्म के नाश से जन्मा हुआ अव्यावाभ सुख नाम का गुण जीव को सुखी बनाता है।
- क्षणिक सुख, मिलावटी मुख, मलिन सुख-भौतिक सुख वेदनीय कर्म के उदय से प्राप्त होता है। अक्षणिक सुख, विशुद्ध सुख-आत्मिक सुख जो वेदनीय कर्म के क्षय से प्राप्त होता है।
- जिस तरह शहद में लिपटी तलवार पहले मिठाश देती है, बाद में जीभ काटकर तीव्र दुःख का अनुभव करवाती है, उसी तरह यह कर्म प्रारंभ में सामान्य सुख देकर बाद में विशेष दुःख प्रदान करता है।
- जीव को भौतिक सुख का अनुभव करवानेवाला-शातावेदनीय कर्म ।
  जीव को भौतिक दुःख का अनुभव करवानेवाला अशातावेदनीय कर्म।

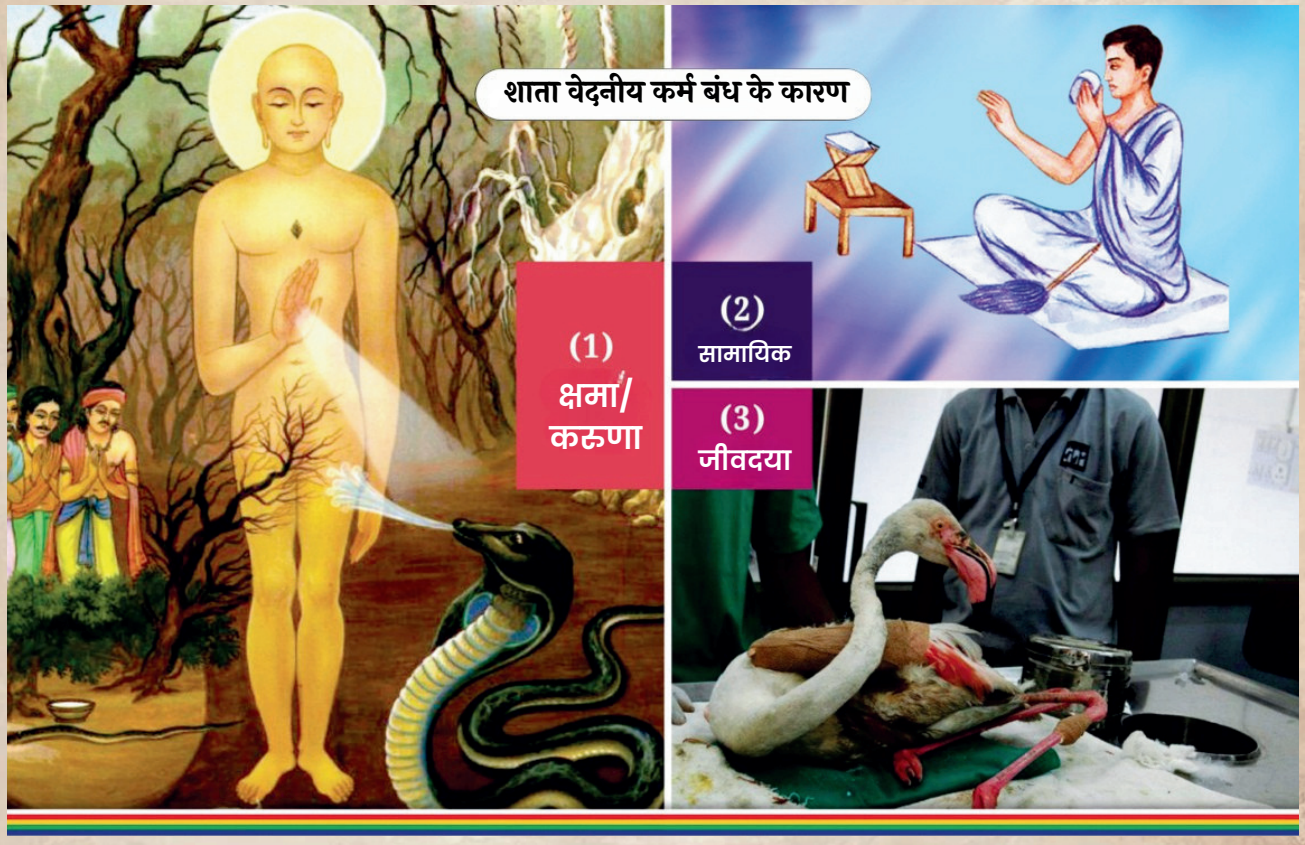

ऐसे अनेक कारणों से जीव शाता-वेदनीय कर्म का बंध करता है।

शाता वेदनीय कर्म बंध के कारण :

- माता-पिता, गुरु, शिक्षक आदि की भक्ति...
- जीवदया का पालन (गाय को घास, कुत्ते को रोटी आदि..)
- सुपात्रदान, तप-त्याग आदि...
- सामायिक-१२ व्रत, १४ नियम आदि से श्रावक धर्म का पालन...
- शारीरिक-मानसिक प्रतिकूलताओं को सहन करना आदि...

ऐसे अनेक कारणों से जीव को अशाता वेदनीय कर्म का बंध होता है।

अशाता वेदनीय कर्म बंध के कारण :

- जीवहिंसा करना, रोना, शोक करना...
- कंजूस बनना या भौतिक साधनों का अमर्यादित उपयोग करना....
- तीव्र कषाय करना, युद्ध करना, दूसरों को बहुत परेशान करना/यातना पहुँचाना।
- झूठ बोलना, चोरी करना, रात्रिभोजन करना...
- १८ पापस्थानको का सेवन...
- गुरु की-वडीलों की अवज्ञा करना, सामने बोलना ।

SESSION 8

नाम-गोत्र कर्म

समान स्वरूप के धारक जीव को उच्च-नीच का लेबल देनेवाला गोत्र कर्म तथा अरूपी जीव को भिन्न भिन्न आकार में ढालनेवाला नाम कर्म

नाम-गोत्र कर्म की समझ :

- आकाश की तरह असंग, अरूपि, अचल जीव को नाम कर्म निश्चित आकार शरीर आदि में डालता है, सर्व जीव समान होते हुए भी जीव को गोत्र कर्म उच्च-नीच के भेद में ढालता है।
- जिस तरह समान मिट्टी से कुम्हार असमान घडे का निर्माण करता है, उसी तरह समान जीव को विभाजित करने का कार्य गोत्र कर्म करता है। दोनों में से कोई एक का बंध-उदय निरंतर होता है। ये सारी देशघाति प्रकृतियाँ है।
- जाति-कुल-संस्कार-सभ्यता-संस्कृति सब पर directly-indirectly इस कर्म की असर होती है।

1) पढना-पढाना

2) दूसरों की तारीफ करना (Appreciate करना)

उच्च गोत्र बंध के कारण

3) तीर्थ का शुद्धिकरण

4) दूसरों के दोषों की उपेक्षा

उपरोक्त कारणों से उच्च गोत्र का बंध होता है।

उच्च गोत्र कर्मबंध के कारण :

- परमात्मा पूजा, गुरुवंदन, अनुकंपा, जीवदया से...
- स्वयं पढना-अन्य को पढाना, पढनेवालो को देखकर आनंदित होना, सहायक बनना आदि...
- किसी की भी Negative Side देखकर स्वस्थ रहना, दोष-दुर्वर्तन की ओर उदासीन रहकर प्रेम जीवंत रखना...
- जंगम-तीर्थ (साधु-साध्वीजी भगवंत) की वैयावच्च करना, स्थावर तीर्थ का शुद्धिकरण-भक्ति आदि करना....

नीच गोत्र बंध के कारण

उपरोक्त कारणों से नीच गोत्र का बंध होता है।

नीच गोत्र कर्मबंध के कारण :

- जाति-कुल-रूप-ऐश्वर्य-शक्ति-तप-संपत्ति आदि का अंहकार करना...
- दूसरों की निंदा-मजाक करना, दूसरों को अकेला कर देना...
- शक्ति होने के बावजूद भी दूसरों की मदद ना करना...
- खुद के दोष छिपाना, माया करना, झूठ बोलना, पोलिटिक्स करके लाभ लेने का प्रयत्न करना...

अन्य बंधन और अन्य के प्रभाव से मुक्त ऐसे जीव को शरीरादि के बंधन का लेबल देनेवाला कर्म-नाम कर्म

नाम कर्म का स्वरूप :

- उज्वल-निर्मल कागज को भिन्न भिन्न कलर से रंगना, जिससे उसका अस्तित्व बिगड जाता है, कागज की उज्वलता भिन्न भिन्न कलर से ढक जाती है, उसी तरह अरूपी-अछेदी-अवेदी अनाशी-अपाशी ऐसा जीव देह के वर्ण-गंध- रस-स्पर्श-आकार-वजन के बंधन में बंधकर दु:खी हो जाता है, इसका चालकबल-नाम कर्म।
- देह जन्य भूख, प्यास, ठंडी, गरमी, रोग, बुढापा, मृत्यु आदि वेदना तथा बंधनो का कारण-नाम कर्म।
- इस कर्म के मुख्य ३ विभाग हैं-पिंडकृति, प्रत्येक प्रकृति और त्रस स्थावर दशक...
- ये सारी प्रकृतियाँ देशघाति-(DK) हैं।

उपरोक्त सारी पिंडप्रकृति शरीर की रचना में मुख्य भूमिका निभाती है।

नामकर्म के विभाग-पिंड प्रकृति

●नामकर्म मुख्य रूप से शरीर से संबंधित कर्म है इसलिए उसके मुख्य भेद को पिंड प्रकृति कहा जाता है। पिंड प्रकृति के १४ मुख्य भेद तथा ७५ उत्तरभेद है। गति, जाति, शरीर, संघयण, संस्थान वर्णादि ४, बंधन, संघातन, विहायोगति और आनुपूर्वी....

●संघयण = हड्डियों की रचना (मेनबोरो)

●संस्थान = बाहर की दिखावट (Looks & Features)

●विहायोगति = शरीर की चाल का प्रकार

●आनुपूर्वी = एक भव से दूसरे भव में विग्रह गति से जाने हेतु ट्रावेल करने हेतु जीव इस कर्म का उपयोग करता है। ऐसे बाह्य शरीर रचना पिंड प्रकृति नामकर्म के अधीन होती है उससे प्राप्त होती है।

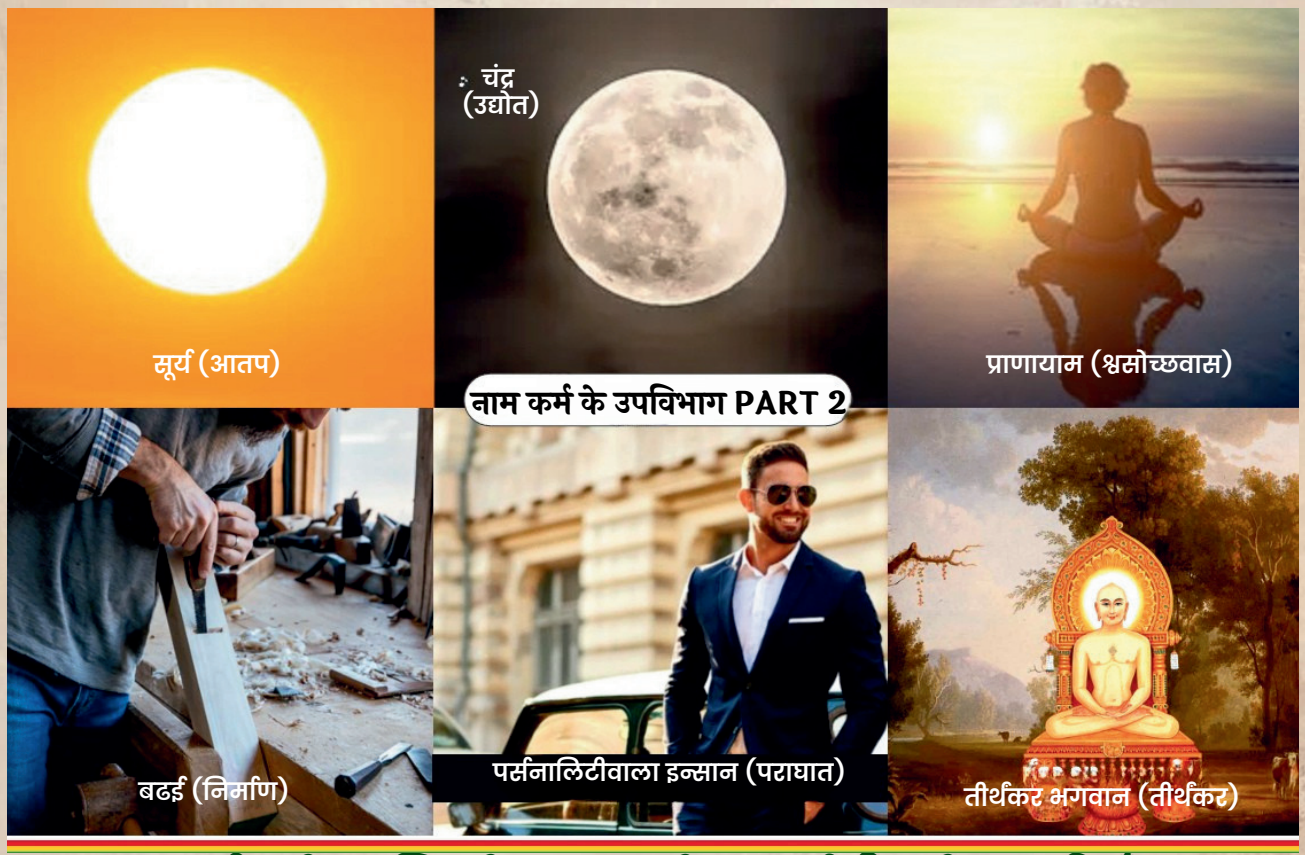

शरीर को (व्यक्ति को) असर करते नामकर्म की प्रत्येक प्रकृतियाँ

नामकर्म के विभाग-प्रत्येक प्रकृति

- बाह्य शरीर या व्यक्तित्व को असर करनेवाली व्यक्तिगत प्रत्येक प्रकृति-उसके ८ भेद हैं:
- आतप-स्वयं शीत, प्रकाश उष्ण
- उद्योत-स्वयं शीत, प्रकाश शीत
- श्वासोच्छवास-श्वास (प्राणवायु) लेना-छोडना
- निर्माण-इन्टीरियर डेकोरेटर बनकर योग्य स्थान पर योग्य अवयवों का स्थापन तथा निर्माण करना।
- उपघात-खुद से ही खुद का पराभव ।
- पराधात-खुद की Personality से दूसरे का वश होना।
- अगुरुलघु-वजन को Maintain करता है।
- तीर्थंकर-अतिविशिष्ट ऐश्वर्य सत्ता का स्वामित्व ।

बाहर से जीव पर असर करनेवाली नामकर्म की "त्रस/स्थावर दशक" की प्रकृतियाँ...

नामकर्म के विभाग "त्रस स्थावर दशक"

- त्रस-इच्छानुसार हिलने जुलने की शक्ति।
- बादर-१, २, संख्यात या असंख्यात इकट्ठा होने के पश्चात् देख सकने की क्षमता।
- पर्याप्त-One type of software
- प्रत्येक-एक जीव, एक शरीर-संपूर्ण मालिकी।
- स्थिर-अवयवों का स्थिर मिलना।
- शुभ-उत्तम अवयवों की प्राप्ति।
- सुस्वर-सूरीले कंठ की प्राप्ति
- सौभाग्य-दूसरों को चाहना-प्रेम मिलना।
- आदेय-आपकी बातों का स्वीकार करवाता है।
- यश-आपकी नामना-प्रतिष्ठा बढ़ाता है।
- ये १० कर्म त्रस दशक हैं, इनके विपरीत १० स्थावर दशक होते हैं।

उपर्युक्त कारणों से शुभ-अशुभ नामकर्म का बंध होता है।

शुभ-अशुभ नामकर्म बंध के कारण :

- पापभय, सरलता, परोपकार तथा सहन करने से शुभ नामकर्म का बंध होता है।
- क्षमा, नम्रता, उदारता, ब्रह्मचर्य, संतोष आदि गुणों से शुभ नामकर्म का बंध होता है।
- संघ-साधु की वैयावच्च, साधु को समाधि दान, शासन प्रभावना आदि से शुभ नामकर्म (तीर्थंकर नामकर्म) का बंध होता है।
- वक्रता, दूसरों को ठगना, निंदा करना, झूठा इलजाम लगाना, चुगली करना आदि से अशुभ नामकर्म का बंध होता है।
- काला जादू करना, दूसरों को नुकसान हो ऐसे स्वार्थ से अशुभ नामकर्म का बंध होता है।
- नकल करना, चोरी करना, चंचलता, माया आदि से अशुभ नामकर्म का बंध होता है।

आठ कर्मों से ढ़का हुआ जीव

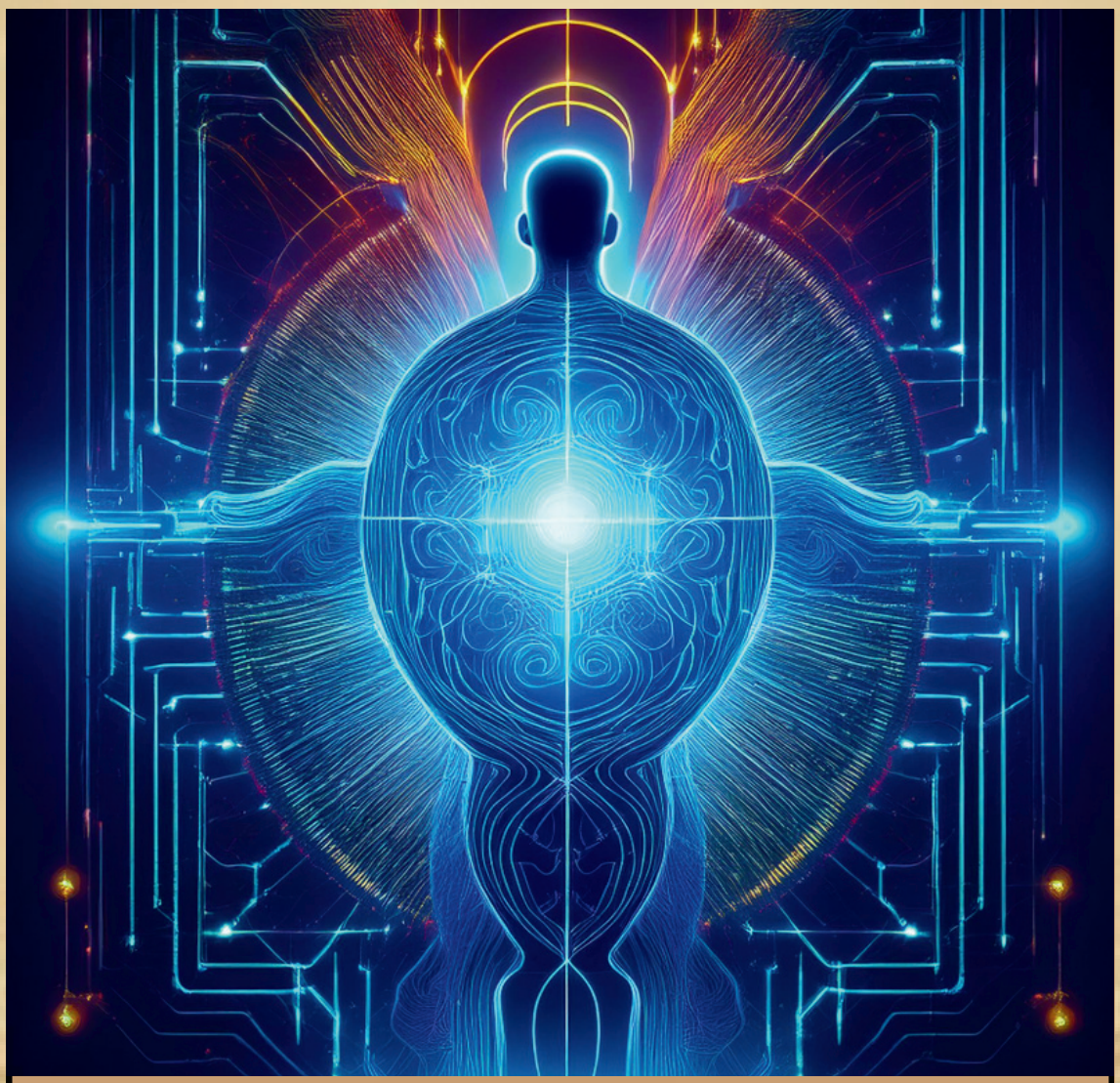

Install किए हुए प्रोग्राम से जिस तरह कम्प्यूटर काम करता है
उसी तरह Install किए प्रोग्राम से आत्मा भी काम करती है।

बस, खुद के बनाए कर्म के प्रोग्राम से फंसे हुए जीव की लाचारी, बेहाली और बरबादी तथा कर्म के प्रोग्राम को Hack करके धर्म-गुण-पुण्य के प्रोग्राम को Install करने से सर्जित आत्मा की समृद्धता स्वतंत्रता को समजने के लिए वांचनावश्यक :-

प्रस्तुत पुस्तक... कर्म विज्ञान